राष्ट्रभाषा पाठ्य पुस्तक

दूसरा पत्र

भाग - 4

कहानी

			पृष्ठ
1.	परीक्षा	...	136
2.	हार की जीत	...	142
3.	मिठाईवाला	...	147
4.	देशभक्त	...	154
5.	पाँच मिनट	...	159
6.	अब्बूखाँ की बकरी	...	164

1. परीक्षा

– प्रेमचंद

कहानीकार का परिचय :

[हिन्दी के श्रेष्ठ उपन्यासकार मुंशी प्रेमचन्द का जन्म 31 जुलाई 1880 ई. को बनारस के पास लमही नामक ग्राम में हुआ। 1919 में बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् अध्यापन से जुड़ गये, किंतु गाँधी जी के द्वारा 1920-21 में चलाये गये असहयोग आंदोलन के समय सरकारी नौकरी से त्याग-पत्र दे दिया। अपने राष्ट्रीय भावों को अभिव्यक्ति देने के लिए प्रेमचंद ने कलम का सहारा लिया और 1930 में 'सरस्वती प्रेस' की स्थापना की। इन्होंने 'हंस' और 'जागरण' पत्रिकाओं का संपादन भी किया।

'प्रेमचंद' का वास्तविक नाम धनपत राय था, किंतु सेवा में रहते हुए इन्होंने नवाबराय नाम से लेखन प्रारंभ किया। 'प्रेमचंद' नाम इनके घनिष्ठ मित्र दयानारायण निगम द्वारा दिया गया।

प्रेमचंद ने शुरू में उर्दू में लिखा, किंतु शीघ्र ही हिन्दी में भी लिखना शुरू कर दिया। इनका पहला हिन्दी उपन्यास 'सेवासदन' 1918 में प्रकाशित हुआ। तत्पश्चात् उन्होंने रंगभूमि, कर्मभूमि, गबन, निर्मला, कायाकल्प, प्रेमाश्रम, प्रतिज्ञा, गोदान जैसे श्रेष्ठ उपन्यास हिन्दी जगत को दिये।

प्रेमचंद द्वारा रचित कहानियों ने कहानी विधा को नवीन दिशा प्रदान की। उनकी बाल मनोविज्ञान और स्त्री मनोविज्ञान पर आधारित कहानियाँ हिन्दी की अमूल्य निधि हैं।

प्रेमचंद भारतीय-साहित्य में किसान के सर्वश्रेष्ठ सृष्टा थे। उनके साहित्य में किसानों के शोषण और उत्पीड़न की कथा है। उनकी रचनाओं में विधवा विवाह, अनमेल विवाह, वेश्याओं की समस्या आदि को वाणी मिली है। गाँधीवादी दर्शन, असहयोग आंदोलन, सत्याग्रह, स्वावलंबन उनके साहित्य के केंद्र में हैं। मानवीय मूल्यों के कुशल चितेरे प्रेमचंद ने आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद को अपने उपन्यासों में स्थान दिया। अंतिम दिनों में प्रेमचंद यथार्थवाद की ओर झुके दिखाई देते हैं। इनका निधन ई. सन् 1936 में हुआ।]

(1)

देवगढ़ के दीवान सरदार सुजानसिंह बूढ़े हुए, तो उन्हें परमात्मा की याद आयी। जाकर उन्होंने महाराज से विनय की, "दीनबन्धु! दास ने श्रीमान की सेवा चालीस साल तक की; अब कुछ दिन परमात्मा की भी सेवा करने की आज्ञा चाहता है। दूसरे, अब मेरी अवस्था भी ढल गयी,

राजकाज संभालने की शक्ति नहीं रह गयी, कहीं भूल-चूक हो जाए, तो बुढ़ापे में दाग लगे, सारी ज़िन्दगी की नेकनामी मिट्टी में मिल जाए।"

राजा साहब अपने अनुभवशील, नीतिकुशल दीवान का बड़ा आदर करते थे। उन्होंने बहुत समझाया, लेकिन जब दीवान साहब ने न माना, तो हारकर उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली; पर शर्त यह लगा दी कि रियासत के लिए नया दीवान आप ही को खोजना पड़ेगा।

दूसरे दिन देश के प्रसिद्ध पत्रों में विज्ञापन निकला, "रियासत देवगढ़ के लिए एक सुयोग्य दीवान की ज़रूरत है। जो सज्जन अपने को इस पद के योग्य समझें, वे वर्तमान दीवान सरदार सुजानसिंह की सेवा में उपस्थित हों। यह ज़रूरी नहीं है कि ग्रेजुएट हों, मगर उनका हृष्ट-पुष्ट होना आवश्यक है। मंदाग्नि के मरीज़ों को यहाँ तक आने का कष्ट उठाने की कोई ज़रूरत नहीं। एक महीने तक उम्मेदवारों की रहन-सहन, आचार-विचार की देखभाल की जाएगी। विद्या का कम, परन्तु कर्तव्य का अधिक विचार किया जाएगा। जो महाशय इस परीक्षा में खरे उतरेंगे, वे उक्त पद पर सुशोभित होंगे।"

(2)

इस विज्ञापन ने सारे मुल्क में हलचल मचा दी। ऐसा ऊँचा पद और किसी प्रकार की क़ैद नहीं, केवल नसीब का खेल है। सैकड़ों आदमी अपना-अपना भाग्य परखने के लिए चल खड़े हुए। देवगढ़ में नये और रंग-बिरंगे मनुष्य दिखाई देने लगे। प्रत्येक रेल-गाड़ी से उम्मेदवारों का एक मेला-सा उतरता; कोई पंजाब से चला आता था, तो कोई मद्रास से। कोई नये फ़ैशन का प्रेमी था, तो कोई पुरानी सादगी पर मिटा हुआ। पंडितों और मौलिवियों को भी अपने-अपने भाग्य की परीक्षा करने का अवसर मिला। बेचारे सनद के नाम पर रोया करते थे, यहाँ उसकी कोई ज़रूरत ही न थी। रंगीन अमामे (पगड़ियाँ) चोगे और नाना प्रकार के अंगरखे और कनटोप देवगढ़ में अपनी सज-धज दिखाने लगे। लेकिन सबसे विशेष संख्या ग्रेजुएटों की थी, क्योंकि सनद की कैद न होने पर भी सनद से परदा तो ढका रहता है।

सरदार सुजानसिंह ने इन महानुभावों के आदर-सत्कार का बड़ा अच्छा प्रबन्ध कर दिया था। लोग अपने-अपने कमरे में बैठे हुए रोज़ादार मुसलमानों की तरह महीने के दिन गिना करते थे। हर एक मनुष्य अपने जीवन को अपनी बुद्धि के अनुसार अच्छे रूप में दिखाने की कोशिश करता था। मिस्टर 'अ' नौ बजे दिन तक सोया करते थे, आजकल वे बग़ीचे में टहलते हुए उषा के दर्शन करते

थे। मिस्टर 'ब' को हुक्का पीने की लत थी, पर आजकल बहुत रात गये, किवाड़ बंद करके अंधेरे में सिगार पीते थे। मिस्टर 'द', 'स' और 'ज' से उनके घरों के नौकरों की नाक में दम था, लेकिन ये सज्जन आजकल 'आप' और 'जनाब' के बगैर नौकरों से बातचीत नहीं करते थे। महाशय 'क' नास्तिक थे, 'हक्सले' के उपासक थे। मगर आजकल उनकी धर्मनिष्ठा देखकर मंदिर के पुजारी को पदच्युत हो जाने की शंका लगी रहती। मिस्टर 'ल' को किताबों से घृणा थी, परन्तु आजकल वे बड़े-बड़े धर्मग्रन्थ खोले पढ़ने में डूबे रहते थे। जिससे बातचीत कीजिये, वही नम्रता और सदाचार का देवता ही मालूम होता था। शर्माजी बड़ी रात ही से वेद-मंत्र पढ़ने लगते थे और मौलवियों को तो नमाज़-तलावत के सिवा और कोई काम ही न था। लोग समझते थे कि एक महीने की झंझट है, किसी तरह काट लें; जो कहीं कार्य सिद्ध हो गया, तो कौन पूछता है।

लेकिन मनुष्यों का वह बूढ़ा जौहरी आड़ में बैठा हुआ देख रहा था कि इन बगुलों में हंस कहाँ छिपा हुआ है।

(3)

एक दिन इन फ़ैशनवालों को सूझा कि आपस में हॉकी का खेल हो जाए। यह प्रस्ताव हॉकी के मंजे हुए खिलाड़ियों ने पेश किया। यह भी तो आख़िर विद्या है। इसे क्यों छिपा रखें? संभव है, कुछ हाथों की सफ़ाई ही काम कर जाए।

चलिये, तय हो गया। कोर्ट बन गया, खेल शुरू हुआ, और गेंद किसी दफ़्तर के अप्रेंटिस की तरह ठोकर खाने लगा। रियासत देवगढ़ में यह खेल बिलकुल निराली बात थी। पढ़े-लिखे भलेमानुस शतरंज और ताश-जैसे गंभीर खेल खेलते थे। दौड़-कूद के खेल बच्चों के खेल समझे जाते थे। खेल बड़े उत्साह के साथ जारी था। धावे से लोग जब गेंद लेकर तेज़ी से उड़ते, तो ऐसा जान पड़ता था कि कोई लहर बढ़ती चली आती है। लेकिन दूसरी ओर के खिलाड़ी इस बढ़ती हुई लहर को इस तरह रोक लेते थे, मानों लोहे की दीवार है।

संध्या तक यही धूम-धाम रही। लोग पसीने से तर हो गये। खून की गर्मी आँख और चेहरे से झलक रही थी। हाँफते-हाँफते बेदम हो गये, लेकिन हार-जीत का निर्णय न हो सका। अंधेरा हो गया था। इस मैदान से ज़रा दूर हटकर एक नाला था। उसका कोई पुल न था। पथिकों को नाले में से चलकर आना पड़ता था। खेल अभी बन्द ही हुआ था और खिलाड़ी लोग बैठे दम ले रहे थे कि एक किसान अनाज़ से भरी हुई गाड़ी लिये उस नाले में आया। लेकिन कुछ तो नाले में कीचड़ था और

कुछ चढ़ाई इतनी ऊँची थी कि गाड़ी ऊपर न चढ़ सकती थी। वह कभी बैलों को ललकारता, कभी पहिये को हाथों से ढकेलता, लेकिन बोझ तो अधिक था और बैल कमज़ोर थे। गाड़ी ऊपर को न चढ़ती और चढ़ती भी तो कुछ दूर चढ़कर फिर खिसककर नीचे पहुँच जाती। किसान बार-बार ज़ोर लगाता और बार-बार झुँझलाकर बैलों को मारता, लेकिन गाड़ी उभरने का नाम न लेती। बेचारा इधर-उधर निराश होकर ताकता, मगर वहाँ कोई सहायक नज़र न आता था। गाड़ी को अकेले छोड़कर वह कहीं जा भी न सकता। बड़ी विपत्ति में फँसा हुआ था। इसी बीच में खिलाड़ी हाथों में डंडे लिये झूमते-झूमते उधर से निकले। किसान ने उनकी तरफ़ सहमी हुई आँखों से देखा; परंतु किसीसे मदद माँगने का साहस न हुआ। खिलाड़ियों ने भी उसको देखा, मगर बन्द आँखों से, जिनमें सहानुभूति का नाम न था। उनमें स्वार्थ था, मद था, मत्सर था, उदासीनता थी; वात्सल्य का नाम तक न था।

(4)

लेकिन उसी समूह में एक ऐसा मनुष्य भी था, जिसके हृदय में दया थी और साहस था। आज हॉकी खेलते हुए उसके पैरों में चोट लगी हुई थी। लंगड़ाता हुआ वह धीरे-धीरे चला आता था। अकस्मात् उसकी निगाह गाड़ी पर पड़ी। वह ठिठक गया। उसे किसान को देखते ही सब बात ज्ञात हो गयी। डंडा एक किनारे रख दिया, कोट उतार डाला और किसान के पास जाकर बोला, "तुम्हारी गाड़ी निकाल दूँ ?"

किसान ने देखा कि एक गठे हुए बदन का लंबा आदमी सामने खड़ा है। डरकर बोला, हुज़ूर, मैं आपसे कैसे कहूँ ?"

युवक ने कहा, "मालूम होता है, तुम यहाँ बड़ी देर से फँसे हुए हो। अच्छा, तुम गाड़ी पर जाकर बैलों को साधो। मैं पहियों को ढकेलता हूँ, अभी गाड़ी ऊपर आती है।"

किसान गाड़ी पर जा बैठा, युवक ने पहियों में ज़ोर लगाकर खिसकाया। कीचड़ बहुत ज़्यादा था। वह घुटने तक ज़मीन में गड़ गया। लेकिन उसने हिम्मत न हारी। उसने फिर ज़ोर किया, उधर किसान ने बैलों को ललकारा, बैलों को सहारा मिला, उनकी भी हिम्मत बँध गयी, उन्होंने कन्धे झुकाकर एक बार जो ज़ोर दिखाया, बस, गाड़ी नाले के ऊपर थी।

किसान युवक के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला, "महाराज! आपने आज मुझे उबार लिया। नहीं तो, सारी रात यहीं बैठना पड़ता।"

युवक ने हँसकर कहा, "अब मुझे कुछ इनाम देते हो ?"

किसान ने गंभीर भाव से कहा, "नारायण चाहेंगे तो दीवानी आपको ही मिलेगी।"

युवक ने किसान की तरफ़ ग़ौर से देखा। उसके मन में एक सन्देह हुआ, क्या यह सुजानसिंह तो नहीं है ? आवाज़ मिलती है, चेहरा-मुहरा भी वही है। किसान ने उसकी ओर तीव्र दृष्टि के साथ देखा। शायद उसके दिल के सन्देह को भाँप गया। मुस्कुराकर बोला, "गहरे पानी में पैठने से ही मोती मिलता है।"

(5)

निदान, महीना पूरा हुआ। चुनाव का दिन आ पहुँचा। उम्मेदवार लोग प्रातःकाल से ही अपनी-अपनी क़िस्मत का फ़ैसला सुनने के लिए उत्सुक थे। दिन काटना पहाड़ हो गया, प्रत्येक के चेहरे पर आशा और निराशा के रंग आते थे। नहीं मालूम आज किसके नसीब जागेंगे, न जाने किसपर लक्ष्मी की कृपा दृष्टि होगी। संध्या समय राजा साहब का दरबार सजाया गया। शहर के रईस और धनाढ्य लोग, राजा के कर्मचारी, दरबारी और दीवानी के उम्मेदवार, सब रंग-बिरंग की सज-धज बनाये दरबार में आ विराजे।

तब सरदार सुजानसिंह ने खड़े होकर कहा, "मेरे दीवानी के उम्मेदवार महाशयो, मैंने आप लोगों को जो कुछ कष्ट दिया हो, उसके लिए क्षमा कीजिए। मुझे इस पद के लिए ऐसे पुरुष की आवश्यकता थी, जिसके हृदय में दया हो और साथ ही साथ आत्मबल भी हो। हृदय वही है जो उदार हो, आत्मबल वही है, जो आपत्ति का वीरता के साथ सामना करे। और इस रियासत के सौभाग्य से हमको ऐसा पुरुष मिल गया। ऐसे गुणवाले संसार में कम हैं वे और जो हैं, कीर्ति और मान के शिखर पर बैठे हुए हैं। उन तक हमारी पहुँच ही नहीं। मैं रियासत को पंडित जानकीनाथ-सा दीवान पाने पर बधाई देता हूँ।"

रियासत के कर्मचारियों और रईसों ने पं. जानकीनाथ की तरफ़ देखा, उम्मेदवारों के दल की आँखें उधर उठीं, मगर उन आँखों में सत्कार था, और इन आँखों में ईर्ष्या थी।

सरदार साहब ने फ़रमाया, "आप लोगों को यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होगी कि जो पुरुष स्वयं ज़ख़्मी होने पर भी एक ग़रीब किसान की भरी हुई गाड़ी को दलदल से निकालकर नाले के ऊपर चढ़ावे, उसके हृदय में साहस, आत्मबल और उदारता का वास है। ऐसा आदमी ग़रीबों को

कभी न सतावेगा। उसका संकल्प दृढ है, जो उसके चित्त को स्थिर रखेगा। वह चाहे धोखा खा जाए, परन्तु दया और धर्म के मार्ग से कभी न हटेगा।"

अभ्यास

'परीक्षा' कहानी का सारांश लिखिए।

"परीक्षा" नामक इस कहानी के कहानीकार प्रेमचंद हैं। आप उपन्यास-सम्राट के नाम से विख्यात हैं। प्रेमचंद ने कई उपन्यास लिखे हैं और कहानियाँ भी। इनकी रचनाओं में कथा-वस्तु, पात्र-निर्माण, वार्तालाप, भाषा-शैली आदि पक्ष आकर्षक ढंग से प्रस्तुत होते हैं।

सरदार सुजानसिंह रियासत देवगढ़ के दीवान थे। वे अपने बुढ़ापे और असमर्थता के कारण पद से मुक्त होना चाहते थे। उन्होंने राजा साहब से विनती की। राजा साहब उन्हें मुक्त करना नहीं चाहते थे। राजा ने अंत में यह शर्त रखी कि योग्य दीवान का चयन सुजानसिंह ही करें और उसके बाद दीवान पद से मुक्त हो जाएँ।

दूसरे दिन देश के सभी प्रमुख समाचार-पत्रों में विज्ञापन निकला, "रियासत देवगढ़ के लिए दीवान का चयन होनेवाला है, यह ज़रूरी नहीं कि आवेदक ग्रेजुएट हों, लेकिन हृष्ट-पुष्ट होना परमावश्यक है। आवेदक एक महीने तक रियासत में रहेंगे। उनकी रहन-सहन, आचार-विचार की जाँच होगी। अंत में फल घोषित किया जाएगा।"

दीवान पद के लिए आवेदन करते हुए सैकड़ों आदमी देवगढ़ आ पहुँचे। वे तरह-तरह के थे। देश के कोने-कोने से लोग आये थे। एक दिन शाम के वक्त मैदान में हॉकी का खेल चल रहा था। दीवान पद के कई उम्मीदवार खेल के बाद लौट रहे थे। तब रास्ते में एक बूढ़े किसान की गाड़ी नाले में फँस गयी थी। कीचड़ भी था। बूढ़ा किसान हज़ार कोशिश कर हार गया था। वह सहायता के लिए इधर-उधर देखता था। लेकिन किसी ने उसपर ध्यान नहीं दिया। क्योंकि सभी उम्मीदवार खेल की वजह से बहुत थक गये थे। इसलिए बूढ़े पर उन्हें दया नहीं आयी।

लेकिन पं. जानकीनाथ से बूढ़े का कष्ट सहा नहीं गया। वह काफ़ी थक गया था और उसके पैरों में चोट लगी हुई थी। वह लंगड़ाता हुआ बूढ़े के पास आया और उसकी सहायता की। गाड़ी ऊपर आ गयी। बूढ़ा जानकीनाथ को आशीर्वाद देकर चला गया।

एक महीना बीत चला। उस दिन नये दीवान की घोषणा होनेवाली थी। सभी लोग इकट्ठे हुए। सुजानसिंह ने पं. जानकीनाथ को रियासत का नया दीवान घोषित किया। उन्होंने कहा – पं.जानकीनाथ ने खुद घायल होकर भी एक गरीब किसान की सहायता की। उनके हृदय में साहस, आत्मबल और उदारता हैं। एक समर्थ दीवान के लिए इन्हीं गुणों की ज़रूरत है।

कभी न सतावेगा। उसका संकल्प दृढ है, जो उसके चित्त को स्थिर रखेगा। वह चाहे धोखा खा जाए, परन्तु दया और धर्म के मार्ग से कभी न हटेगा।"

अभ्यास

'परीक्षा' कहानी का सारांश लिखिए।

"परीक्षा" नामक इस कहानी के कहानीकार प्रेमचंद हैं। आप उपन्यास-सम्राट के नाम से विख्यात हैं। प्रेमचंद ने कई उपन्यास लिखे हैं और कहानियाँ भी। इनकी रचनाओं में कथा-वस्तु, पात्र-निर्माण, वार्तालाप, भाषा-शैली आदि पक्ष आकर्षक ढंग से प्रस्तुत होते हैं।

सरदार सुजानसिंह रियासत देवगढ़ के दीवान थे। वे अपने बुढ़ापे और असमर्थता के कारण पद से मुक्त होना चाहते थे। उन्होंने राजा साहब से विनती की। राजा साहब उन्हें मुक्त करना नहीं चाहते थे। राजा ने अंत में यह शर्त रखी कि योग्य दीवान का चयन सुजानसिंह ही करें और उसके बाद दीवान पद से मुक्त हो जाएँ।

दूसरे दिन देश के सभी प्रमुख समाचार-पत्रों में विज्ञापन निकला, "रियासत देवगढ़ के लिए दीवान का चयन होनेवाला है, यह ज़रूरी नहीं कि आवेदक ग्रेजुएट हों, लेकिन हृष्ट-पुष्ट होना परमावश्यक है। आवेदक एक महीने तक रियासत में रहेंगे। उनकी रहन-सहन, आचार-विचार की जाँच होगी। अंत में फल घोषित किया जाएगा।"

दीवान पद के लिए आवेदन करते हुए सैकड़ों आदमी देवगढ़ आ पहुँचे। वे तरह-तरह के थे। देश के कोने-कोने से लोग आये थे। एक दिन शाम के वक्त मैदान में हॉकी का खेल चल रहा था। दीवान पद के कई उम्मीदवार खेल के बाद लौट रहे थे। तब रास्ते में एक बूढ़े किसान की गाड़ी नाले में फँस गयी थी। कीचड़ भी था। बूढ़ा किसान हज़ार कोशिश कर हार गया था। वह सहायता के लिए इधर-उधर देखता था। लेकिन किसी ने उसपर ध्यान नहीं दिया। क्योंकि सभी उम्मीदवार खेल की वजह से बहुत थक गये थे। इसलिए बूढ़े पर उन्हें दया नहीं आयी।

लेकिन पं. जानकीनाथ से बूढ़े का कष्ट सहा नहीं गया। वह काफ़ी थक गया था और उसके पैरों में चोट लगी हुई थी। वह लंगड़ाता हुआ बूढ़े के पास आया और उसकी सहायता की। गाड़ी ऊपर आ गयी। बूढ़ा जानकीनाथ को आशीर्वाद देकर चला गया।

एक महीना बीत चला। उस दिन नये दीवान की घोषणा होनेवाली थी। सभी लोग इकट्ठे हुए। सुजानसिंह ने पं. जानकीनाथ को रियासत का नया दीवान घोषित किया। उन्होंने कहा – पं.जानकीनाथ ने खुद घायल होकर भी एक गरीब किसान की सहायता की। उनके हृदय में साहस, आत्मबल और उदारता हैं। एक समर्थ दीवान के लिए इन्हीं गुणों की ज़रूरत है।

2. हार की जीत

— सुदर्शन

कहानीकार का परिचय :

(प्रेमचंदयुगीन कथाकारों में सुदर्शन (1895-1967) का महत्वपूर्ण स्थान है और सुदर्शन के कथा साहित्य के अध्ययन के बिना उस युग की साहित्यिक प्रवृत्तियों को समझना कठिन है।

अपने कुछ समकालीन लेखकों – प्रेमचंद, पृथ्वीनाथ भट्ट आदि की भाँति सुदर्शन भी पहले उर्दू में रचना करते थे। हिंदी में उनकी पहली कहानी 'हार की जीत' 1920 में 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई थी। इस अकेली कहानी ने गुलेरी की 'उसने कहा था' की भाँति धूम मचायी। 'हार की जीत' के अतिरिक्त सुदर्शन की 'कमल की बेटी', 'कवि की स्त्री', 'तीर्थ-यात्रा', 'संसार की सबसे बड़ी कहानी' आदि बहुचर्चित और सुप्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

प्रेमचंद की आरंभिक कहानियों और सुदर्शन की कहानियों में वस्तुगठन, भाषा आदि की दृष्टि से पर्याप्त समानता लक्षित होती है। संयोग के आधार पर घटना, संयोजन, किसी आदर्श या जीवन मूल्य के इर्द-गिर्द कथानक की बुनावट, हृदय परिवर्तन के नुस्खे, सामाजिक समस्याओं का समाधान, बुराई पर अच्छाई की या पाप पर पुण्य की विजय और परंपरागत मूल्यों की स्थापना आदि सुदर्शन की ऐसी विशेषताएँ हैं जो उस युग के अन्य कथाकारों में भी विद्यमान हैं। परंतु सुदर्शन की कहानियों में जीवन-सत्यों और मानवीय भावनाओं का अत्यंत रोचक, सरस और हृदयग्राही वर्णन है जो प्रेमचंद-युगीन मानकों का दुहराव मात्र नहीं कहा जा सकता। मध्यवर्गीय और ग्राम्य जीवन से जुड़े चरित्रों का चरित्रांकन करने में सुदर्शन विशेष रूप से सिद्धहस्त हैं।)

माँ को अपने बेटे और किसान को अपने लहलहाते खेत देखकर जो आनंद आता है, वही आनंद बाबा भारती को अपना घोड़ा देखकर आता था। भगवद्-भजन से जो समय बचता, वह घोड़े को अर्पित हो जाता। वह घोड़ा बड़ा सुन्दर था, बड़ा बलवान्। इसके जोड़ का घोड़ा सारे इलाके में न था। बाबा भारती उसे 'सुलतान' कहकर पुकारते, अपने हाथ से खरहरा करते, खुद दाना खिलाते और देख-देखकर प्रसन्न होते थे। उन्होंने रुपया, माल, असबाब, ज़मीन आदि अपना सब-कुछ छोड़ दिया था, यहाँ तक कि उन्हें नगर के जीवन से भी घृणा थी। अब गाँव से बाहर एक छोटे से मंदिर में रहते और भगवान का भजन करते थे। "मैं, सुलतान बिना नहीं रह सकूँगा", उन्हें ऐसी भ्रांति-सी हो गयी थी। वे उसकी चाल पर लट्टू थे। कहते – ऐसा चलता है जैसे मोर घटा को देखकर नाच रहा हो। जब तक संध्या समय सुलतान पर चढ़कर आठ-दस मील का चक्कर न लगा लेते उन्हें चैन न आता।

खड्गसिंह उस इलाके का प्रसिद्ध डाकू था। लोग उसका नाम सुनकर कांपते थे। होते-होते सुलतान की कीर्ति उसके कानों तक भी पहुँची। उसका हृदय उसे देखने के लिए अधीर हो उठा। वह एक दिन दोपहर के समय बाबा भारती के पास पहुँचा और नमस्कार करके बैठ गया।

बाबा भारती ने पूछा, "खड्गसिंह, क्या हाल है?"

खड्गसिंह ने सिर झुकाकर उत्तर दिया, "आपकी दया है।"

"कहो, इधर कैसे आ गये?"

"सुलतान की चाह खींच लायी।"

"विचित्र जानवर है। देखोगे तो प्रसन्न हो जाओगे।"

"मैंने भी बड़ी प्रशंसा सुनी है।"

"उसकी चाल तुम्हारा मन मोह लेगी।"

"कहते हैं, देखने में भी बड़ा सुंदर है।"

"क्या कहना। जो उसे एक बार देख लेता हैं, उसके हृदय पर उसकी छवि अंकित हो जाती है।"

"बहुत दिनों से अभिलाषा थी, आज उपस्थित हो सका हूँ।"

बाबा भारती और खड्गसिंह अस्तबल में पहुँचे। बाबा ने घोड़ा दिखाया घमंड से, खड्गसिंह ने घोड़ा देखा आश्चर्य से। उसने सहस्रों घोड़े देखे थे, परंतु ऐसा बाँका घोड़ा उसकी आँखों से कभी न गुज़रा था। सोचने लगा, भाग्य की बात है। ऐसा घोड़ा खड्गसिंह के पास होना चाहिए था। इस साधु को ऐसी चीज़ों से क्या लाभ। कुछ देर तक आश्चर्य से चुपचाप खड़ा रहा। इसके पश्चात् उसके हृदय में हलचल होने लगी। बालकों की-सी अधीरता से बोला, "परंतु बाबाजी, इसकी चाल न देखी तो क्या!"

बाबाजी भी मनुष्य ही थे। अपनी वस्तु की प्रशंसा दूसरे के मुख से सुनने के लिए उनका हृदय अधीर हो गया। घोड़े को खोलकर बाहर गये। घोड़ा वायुवेग से उड़ने लगा। उसकी चाल देखकर खड्गसिंह के हृदय पर साँप लोट गया। वह डाकू था और जो वस्तु उसे पसंद आ जाए उसपर वह अपना अधिकार समझता था। उसके पास बाहुबल था और आदमी थे। जाते-जाते उसने कहा, "बाबाजी, मैं यह घोड़ा आपके पास न रहने दूँगा।"

बाबा भारती डर गये। अब उन्हें रात को नींद न आती। सारी रात अस्तबल की रखवाली में कटने लगी। प्रतिक्षण खड्गसिंह का भय लगा रहता, परंतु कई मास बीत गये और वह न आया।

यहाँ तक कि बाबा भारती कुछ असावधान हो गये और इस भय को स्वप्न के भय की नाईं मिथ्या समझने लगे।

संध्या का समय था। बाबा भारती सुलतान की पीठ पर सवार होकर घूमने जा रहे थे। इस समय उनकी आँखों में चमक थी, मुख पर प्रसन्नता। कभी घोड़े के शरीर को देखते, कभी उसके रंग को और मन में फूले न समाते थे।

सहसा एक ओर से आवाज़ आयी, "ओ बाबा, इस कंगाले की सुनते जाना।"

आवाज़ में करुणा थी। बाबा ने घोड़े को रोक लिया। देखा, एक अपाहिज वृक्ष की छाया में पड़ा कराह रहा है। बोले, "क्यों, तुम्हें क्या कष्ट है?"

अपाहिज ने हाथ जोड़कर कहा, "बाबा, मैं दुखिया हूँ। मुझपर दया करो। रामावाला यहाँ से तीन मील है, मुझे वहाँ जाना है। घोड़े पर चढ़ा लो, परमात्मा भला करेगा।"

"वहाँ तुम्हारा कौन है?"

"दुर्गादत्त वैद्य का नाम सुना होगा। उनका सौतेला भाई हूँ।"

बाबा भारती ने घोड़े से उतरकर अपाहिज को घोड़े पर सवार किया और स्वयं उसकी लगाम पकड़कर धीरे-धीरे चलने लगे।

सहसा उन्हें एक झटका-सा लगा और लगाम हाथ से छूट गयी। उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा, जब उन्होंने देखा कि अपाहिज पीठ पर तनकर बैठा है और घोड़े को दौड़ाये लिए जा रहा है। उनके मुख से भय, विस्मय और निराशा से मिली हुई चीख निकल गयी। वह अपाहिज डाकू खड्गसिंह था।

बाबा भारती कुछ देर तक चुप रहे और इसके पश्चात् कुछ निश्चय करके पूरे बल से चिल्लाकर बोले, "ज़रा ठहर जाओ।"

खड्गसिंह ने आवाज़ सुनकर घोड़ा रोक लिया और उसकी गर्दन पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा, "बाबाजी, यह घोड़ा अब न दूँगा।"

"परन्तु एक बात सुनते जाओ।"

खड्गसिंह ठहर गया। बाबा भारती ने निकट जाकर उसकी ओर ऐसी आँखों से देखा जैसे बकरा कसाई की ओर देखता है, और कहा "यह घोड़ा तुम्हारा हो चुका। मैं तुमसे इसे वापस करने के लिए न कहूँगा। परंतु खड्गसिंह, केवल एक प्रार्थना करता हूँ। उसे अस्वीकार न करना, नहीं तो मेरा दिल टूट जाएगा।"

"बाबाजी, आज्ञा कीजिये। मैं आपका दास हूँ, केवल यह घोड़ा न दूँगा।"

"अब घोड़े का नाम न लो। मैं तुमसे इसके विषय में कुछ न कहूँगा। मेरी प्रार्थना केवल यह है कि इस घटना को किसी के सामने प्रकट न करना।"

खड्गसिंह का मुँह आश्चर्य से खुला रह गया। उसका विचार था कि उसे घोड़े को लेकर यहाँ से भागना पड़ेगा, परंतु बाबा भारती ने स्वयं उससे कहा कि इस घटना को किसी के सामने प्रकट न करना। इससे क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? खड्गसिंह ने बहुत सिर मारा, परंतु कुछ समझ न सका। हारकर उसने अपनी आँखें बाबा भारती के मुख पर गड़ा दीं और पूछा, "बाबाजी, इससे आपको क्या डर है?"

सुनकर बाबा भारती ने उत्तर दिया, "लोगों को यदि इस घटना का पता लग गया तो वे किसी गरीब पर विश्वास न करेंगे।" यह कहते-कहते उन्होंने सुलतान की ओर से इस तरह मुँह मोड़ लिया जैसे उनका उससे कभी कोई संबंध ही नहीं रहा हो।

बाबा भारती चले गये, परंतु उनके शब्द खड्गसिंह के कानों में उसी प्रकार गूँज रहे थे। सोचता था, कैसे ऊँचे विचार हैं, कैसा पवित्र भाव है! उन्हें इस घोड़े से प्रेम था, इसे देखकर उनका मुख फूल की नाईं खिल जाता था। कहते थे, "इसके बिना मैं रह न सकूँगा।" इसकी रखवाली में कई रात सोये नहीं। भजन-भक्ति न कर रखवाली करते रहे। परंतु आज उनके मुख पर दुख की रेखा तक न दिखाई पड़ती थी। उन्हें केवल यह ख्याल था कि कहीं लोग गरीबों पर विश्वास करना न छोड़ दें। ऐसा मनुष्य, मनुष्य नहीं देवता है।

रात्रि के अंधकार में खड्गसिंह बाबा भारती के मंदिर में पहुँचा। चारों ओर सन्नाटा था। आकाश में तारे टिमटिमा रहे थे। थोड़ी दूर पर गाँवों के कुत्ते भूँक रहे थे। मंदिर के अंदर कोई शब्द सुनाई न देता था। खड्गसिंह सुलतान की बाग पकड़े हुए था। वह धीरे-धीरे अस्तबल के फाटक पर पहुँचा। फाटक खुला पड़ा था। किसी समय वहाँ बाबा भारती स्वयं लाठी लेकर पहरा देते थे, परंतु आज उन्हें किसी चोरी, किसी डाके का भय न था। खड्गसिंह ने आगे बढ़कर सुलतान को उसके स्थान पर बाँध दिया और बाहर निकलकर सावधानी से फाटक बंद कर दिया। इस समय उसकी आँखों में नेकी के आँसू थे।

रात्रि का तीसरा पहर बीत चुका था। चौथा पहर आरंभ होते ही बाबा भारती ने अपनी कुटिया से बाहर निकल ठंडे जल से स्नान किया। उसके पश्चात् इस प्रकार जैसे कोई स्वप्न में चल रहा हो, उनके पाँव अस्तबल की ओर बढ़े। परंतु फाटक पर पहुँचकर उनको अपनी भूल प्रतीत हुई। साथ घोर निराशा ने पाँवों को मन-मन भर का भारी बना दिया। वे वहीं रुक गये।

घोड़े ने अपने स्वामी के पाँवों की चाप को पहचान लिया और ज़ोर से हिनहिनाया।

अब बाबा भारती आश्चर्य और प्रसन्नता से दौड़ते हुए अंदर घुसे और अपने प्यारे घोड़े के गले से लिपटकर इस प्रकार रोने लगे मानों कोई पिता बहुत दिन के बिछुड़े हुए पुत्र से मिल रहा हो। बार-बार उसकी पीठ पर हाथ फेरते, बार-बार उसके मुँह पर थपकियाँ देते।

फिर वे संतोष से बोले, "अब कोई गरीबों की सहायता से मुँह न मोड़ेगा।" -

अभ्यास

'हार की जीत' कहानी का सारांश लिखिए।

सुदर्शन हिंदी कहानीकारों में प्रमुख हैं। हिंदी कहानी-साहित्य के विकास में सुदर्शन का महत्वपूर्ण स्थान है। 'हार की जीत' उनकी पहली कहानी है।

बाबा भारती एक साधु थे। वे सब-कुछ त्यागकर गाँव के बाहर एक मंदिर में रहते थे। उनके पास एक सुंदर घोड़ा था। चाल में उसके जोड़ का घोड़ा उस प्रदेश में नहीं था। बाबा भारती घोड़े से बहुत प्यार करते थे। रोज़ शाम को घोड़े पर बैठकर आठ-दस मील घूमते थे। घोड़े को लेकर वे फूले न समाते थे। घोड़े का नाम सुलतान था।

खड्गसिंह वहाँ का एक डाकू था। लोग उसका नाम सुनकर काँपते थे। उसने सुलतान के बारे में सुना। वह एक दिन बाबा भारती के पास आया। उसने घोड़ा देखा, तो उसपर उसे बड़ा मोह हो गया। किसी न किसी तरह सुलतान को हड़पने की ठान ली। जाते-जाते उसने कहा – बाबाजी, इस घोड़े को आपके पास रहने नहीं दूँगा। यह सुनकर बाबा भारती बेचैन हो गये। सदा उनके मन में डर होता रहा कि कहीं खड्गसिंह आकर घोड़े को ले न जाए। यह घटना होकर कुछ समय हो गया। बाबाजी भी इस घटना को भूल गये थे।

एक दिन हमेशा की तरह बाबाजी शाम के वक्त घोड़े पर सवार होकर चल रहे थे। तब रास्ते में एक अपाहिज ने विनती की कि उसे घोड़े पर चढ़ा लिया जाए। बाबाजी को दया आयी। उन्होंने उसे घोड़े पर बिठाया। वह घोड़े के लगाम पकड़कर चलने लगा। अचानक लगाम हाथ से छूट गया। घोड़ा दौड़ने लगा। वह अपाहिज ठीक से बैठ गया। वह अपाहिज खड्गसिंह था। उसने कहा – "बाबाजी, अब यह घोड़ा मेरा हो गया।" कहते-कहते वह चलने लगा।

बाबा भारती एक क्षण के लिए अवाक् रहे, लेकिन तुरंत संभल गये। उन्होंने खड्गसिंह को रोककर कहा कि मानता हूँ कि यह घोड़ा तुम्हारा हो चुका। मैं घोड़ा नहीं माँगूँगा। लेकिन इस घटना के बारे में किसी से कुछ न कहना।

खड्गसिंह ने परेशान होकर कारण पूछा। तब बाबा भारती ने कहा कि यह बात किसी को मालूम हो जाए, तो लोग किसी गरीब या अपाहिज पर विश्वास नहीं करेंगे, उन्हें उनपर दया नहीं आएगी।

यह सुनकर खड्गसिंह की आँखें खुल गयीं। वह बाबा भारती के उच्च विचार के सामने एकदम हार गया। वह उसी दिन घोड़े को अस्तबल में छोड़कर चला गया। सुलतान को पाकर बाबा भारती बेहद खुश हुए और सजल नेत्रों से कहने लगे – "अब गरीबों की सहायता से कोई मुँह न मोड़ेगा"।

3. मिठाईवाला

- श्री भगवती प्रसाद वाजपेयी

बहुत ही मीठे स्वरों के साथ वह गलियों में घूमता हुआ कहता–"बच्चों को बहलानेवाला !"

इस अधूरे वाक्य को वह ऐसे विचित्र, किंतु मादक मधुर ढंग से गाकर कहता कि सुननेवाले एक बार अस्थिर हो उठते। उसके स्नेहाभिषिक्त कंठ से फूटा हुआ उपर्युक्त गान सुनकर निकट के मकानों में हलचल मच जाती। छोटे-छोटे बच्चों को अपनी गोद में लिये हुए युवतियाँ चिकों को उठाकर छज्जों पर से नीचे झाँकने लगतीं। गलियों और उनके अन्तर्व्यापी छोटे-छोटे उद्यानों में खेलते और इठलाते हुए बच्चों का झुंड उसे घेरा लेता और तब वह खिलौनेवाला वहीं बैठकर खिलौने की पेटी खोल देता।

बच्चे खिलौने देखकर पुलकित हो उठते। वे पैसे लाकर खिलौनों का मोल-भाव करने लगते। पूछते–"इछका दाम क्या है, औल इछका, औल इछका" खिलौनेवाला बच्चों को देखता, उनकी नन्हीं-नन्हीं उँगलियों और हथेलियों से पैसे ले लेता और बच्चों के इच्छानुसार उन्हें खिलौने दे देता। खिलौने लेकर फिर बच्चे उछलने-कूदने लगते और तब फिर खिलौनेवाला उसी प्रकार कहता-' बच्चों को बहलानेवाला, खिलौनेवाला !' सागर की हिलोर की भाँति उसका वह मादक गान गली-भर के मकानों में इस ओर से उस ओर तक लहराता हुआ पहुँचता और खिलौनेवाला आगे बढ़ जाता।

राय विजयबहादुर के बच्चे भी एक दिन खिलौने लेकर घर आये। वे दो बच्चे थे, चुन्नू और मुन्नू । चुन्नू जब खिलौने ले आया, तो बोला– "मेला घोला कैछा छुन्दल ऐ !" मुन्नू बोला– "औल देखो मेला आती कैछा छुन्दल ऐ !"

दोनों अपने घोड़े-हाथी लेकर घर-भर में उछलने लगे। इन बच्चों की माँ रोहिणी कुछ देर खड़े-खड़े उनका खेल निरखती रही। अंत में उसने दोनों बच्चों को बुलाकर पूछा, "अरे ओ चुन्नू-मुन्नू ,ये खिलौने तुमने कितने में लिये हैं ?"

मुन्नू बोला–"दो पैछे में। खिलौने वाला दे गया ऐ।"

रोहिणी सोचने लगी-इतने सस्ते कैसे दे गया है ?

कैसे दे गया है, यह तो वही जाने। लेकिन दे तो गया है, इतना तो निश्चित है।

एक ज़रा-सी बात ठहरी, रोहिणी अपने काम में लग गयी। फिर कभी उसे इसपर विचार करने की आवश्यकता ही भला क्यों पड़ती?

(2)

छः महीने बाद–

नगर-भर में दो ही चार दिनों में एक मुरलीवाले के आने का समाचार फैल गया। लोग कहने लगे–"भई वाह! मुरली बजाने में वह एक ही उस्ताद है। मुरली बजाकर वह मुरली बेचता भी है; सो भी दो-दो पैसे में। भला इसमें उसे क्या मिलता होगा? मेहनत भी तो न आती होगी।"

एक व्यक्ति ने पूछ दिया–"कैसा है वह मुरलीवाला, मैंने तो उसे नहीं देखा।"

उत्तर मिला–"उमर तो उसकी अभी अधिक न होगी, यही तीस-बत्तीस की होगी। दुबला-पतला गोरा युवक है, बीकानेरी रंगीन साफ़ा बाँधता है।"

"वही तो नहीं, जो पहले खिलौने बेचा करता था?"

"क्या वह पहले खिलौने बेचता था?"

"हाँ, जो आकार-प्रकार तुमने बतलाया, उसी प्रकार का वह भी था।"

"तो वही होगा। पर भई, है वह एक ही उस्ताद।"

प्रतिदिन इसी प्रकार उस मुरलीवाले की चर्चा होती। प्रतिदिन नगर की प्रत्येक गली में उसका मादक मृदुल स्वर सुनाई पड़ता–"बच्चों को बहलानेवाला, मुरलियावाला!"

रोहिणी ने भी मुरलीवाले का वह स्वर सुना। तुरंत ही उसे खिलौनेवाले का स्मरण हो आया। उसने मन ही मन कहा–"खिलौनेवाला भी इसी तरह गा-गाकर खिलौने बेचा करता था।"

रोहिणी उठकर अपने पति विजयबाबू के पास गयी और बोली–"जरा उस मुरलीवाले को बुलाओ तो, चुन्नू-मुन्नू के लिए भी ले लूँ। क्या जाने वह इधर आये या न आये? वे भी, जान पड़ता है, पार्क में खेलने निकल गये हैं।"

विजयबाबू एक समाचारपत्र पढ़ रहे थे। उसी तरह उसे लिए हुए वे दरवाजे पर आकर मुरलीवाले से बोले–"क्यों भई, किस तरह देते हो मुरली?"

किसीकी टोपी गली में गिर पड़ी। किसीका जूता पार्क में ही छूट गया और किसीकी सूथनी ही ढीली होकर लटक आयी। इस तरह दौड़ते-हाँफते हुए बच्चों का झुंड आ पहुँचा। एक स्वर हो सब बोल उठे–"अम बी लेदे मुल्ली, औल अम बी लेंदे मुल्ली।"

मुरलीवाला हर्ष से गद्‌गद् हो उठा। बोला–"सबको देंगे भैया, जरा रुको, ज़रा ठहरो, एक-एक को लेने दो। अभी इतनी जल्दी हम कहीं लौट थोड़े ही जाएँगे? बेचने तो आये ही हैं और हैं भी इस समय मेरे पास एक-दो नहीं, पूरी सत्तावन। हाँ बाबूजी, क्या पूछा था आपने, कितने में दी?... दी तो वैसे तीन-तीन पैसे के हिसाब से है, पर आपको दो-दो पैसे में ही दे दूंगा।"

विजयबाबू भीतर-बाहर दोनों रूपों में मुस्कुरा दिये। मन ही मन कहने लगे–"कैसा ठग है! देता सबको इसी भाव से है, पर मुझपर उलटा एहसान लाद रहा है।" फिर बोले–"तुम लोगों की झूठ बोलने को आदत ही होती है। देते होगे सभी को दो-दो पैसे में, एहसान का बोझ मेरे ही ऊपर लाद रहे हो!"

मुरलीवाला एकदम अप्रतिभ हो उठा। बोला–"आपको क्या पता बाबूजी कि इनकी असली लागत क्या है? यह तो ग्राहकों का दस्तूर होता है कि दूकानदार चाहे हानि ही उठाकरचीज़ क्यों न बेचे, पर ग्राहक यही समझते हैं–दूकानदार हमें लूट रहा है। आप भला, काहे को विश्वास करेंगे? लेकिन सच पूछिये बाबूजी, इनका असली दाम दो ही पैसा है। आप कहीं से भी दो-दो पैसे में ये मुरलियाँ नहीं पा सकते। मैंने तो पूरी एक हजार बनवायी थीं, तब मुझे यह भाव पड़ती है।"

विजयबाबू बोले–"अच्छा, अच्छा, मुझे ज्यादा वक्त नहीं है। जल्दी से निकाल दो!"

दो मुरलियाँ लेकर विजयबाबू फिर मकान के भीतर पहुँच गये।

मुरलीवाला देर तक उन बच्चों के झुंड में मुरलियाँ बेचता रहा। उसके पास कई रंगों की मुरलियाँ थीं। बच्चे जो रंग पसंद करते, मुरलीवाला उसी रंग की मुरली निकाल देता।

"यह बड़ी अच्छी मुरली है, तुम यही ले लो बाबू, राजा बाबू, तुम्हारे लायक़ तो बस, यह है! ....हाँ, भैया, तुमको वही देंगे। ये लो!.... तुमको वैसी न चाहिए, ऐसी चाहिए? वह नारंगी रंग की? अच्छा, यही लो।....पैसे नहीं है? अच्छा, अम्मा से पैसे ले आओ। मैं अभी बैठा हूँ।.... तुम ले आये पैसे? अच्छा, यह लो, तुम्हारे लिए मैंने पहले ही से यह निकाल रखी थी!.... तुमको पैसे नहीं मिले? तुमने अम्मा से ठीक तरह से माँगा न होगा। धोती पकड़के, पैरों में लिपटके अम्मा से पैसे माँगे जाते हैं, बाबू! हाँ, फिर जाओ। अब की बार मिल जाएँगे।.... दुअन्नी है? तो क्या हुआ; ये छे पैसे वापस

लो, ठीक हो गया न हिसाब? मिल गये पैसे? देखो, मैंने कैसी तरक़ीब बतायी! .... अच्छा, अब तो किसीको नहीं लेना है? सब ले चुके?....तुम्हारी माँ के पास पैसे नहीं हैं ? अच्छा, तुम भी यह लो....अच्छा, तो अब मैं चलता हूँ।"

इस तरह मुरलीवाला फिर आगे बढ़ गया।

(3)

आज अपने मकान में बैठी हुई रोहिणी मुरलीवाले की सारी बातें सुनती रही। आज भी उसने अनुभव किया कि बच्चों के साथ इतने प्यार से बातें करनेवाला फेरीवाला पहले कभी नहीं आया था। फिर, वह सौदा भी कैसा सस्ता बेचता है और आदमी कैसा भला जान पड़ता है ! समय की बात है, जो बेचारा इस तरह मारा-मारा फिरता है। पेट जो न कराये सो थोड़ा।

इसी समय मुरलीवाले का तीक्ष्ण स्वर निकट की दूसरी गली में से सुनाई पड़ा– "बहलानेवाला, मुरलियावाला!"

रोहिणी इसे सुनकर मन ही मन कहने लगी–'और कैसा मीठा स्वर है उसका!'

बहुत दिनों तक रोहिणी को मुरलीवाले का यह मीठा स्वर और उसकी बच्चों के प्रति स्नेहसिक्त बातें याद आती रहीं। महीने के महीने आये और चले गये। पर मुरलीवाला न आया। फिर धीरे-धोरे उसकी स्मृति क्षीण होती गयी।

(4)

आठ मास बाद–

सरदी के दिन थे। रोहिणी स्नान करके अपने मकान की छत पर चढ़कर आजानु विलंबित केश-राशि सुखा रही थी। इसी समय नीचे की गली में सुनाई पड़ा–"बच्चों को बहलानेवाला, मिठाईवाला।"

मिठाईवाले का यह स्वर परिचित था, झट-से रोहिणी नीचे उतर आयी। इस समय उसके पति मकान में नहीं थे। हाँ, उसकी वृद्धा दादी थी। रोहिणी उसके निकट आकर बोली–"दादी, चुन्नू-मुन्नू के लिए मिठाई लेनी है। ज़रा कमरे में चलकर ठहराओ तो। मैं उधर कैसे जाऊँ, कोई आता न हो। ज़रा हटकर मैं भी चिक की ओट में बैठी रहूँगी।"

दादी उठकर कमरे में आकर बोली, "ऐ मिठाईवाले, इधर आना।"

मिठाईवाला निकट आ गया। बोला–"माँ, कितनी मिठाई दूँ? नयी तरह की मिठाइयाँ हैं; रंग-बिरंगी; कुछ-कुछ खट्टी, कुछ-कुछ मीठी और ज़ायकेदार। बड़ी देर तक मुँह में टिकती हैं। जल्दी नहीं घुलतीं। बच्चे इन्हें बड़े चाव से चूसते हैं। कितनी दूँ? चपटी, गोल और पहलदार गोलियाँ हैं। पैसे की सोलह देता हूँ।

दादी बोली–"सोलह तो बहुत कम होती हैं। भला, पचीस तो देते।"

मिठाईवाला–"नहीं दादी, अधिक नहीं दे सकता। इतनी भी कैसे देता हूँ, यह अब मैं तुम्हें क्या....खैर, मैं अधिक, तो न दे सकूँगा।"

रोहिणी दादी के पास ही बैठी थी। बोली–"दादी, फिर भी काफ़ी सस्ती दे रहा है। चार पैसे की ले लो। ये पैसे. रहे।"

मिठाईवाला मिठाइयाँ गिनने लगा।

"चार पैसे की दे दो। अच्छा, पचीस न सही; बीस ही दो। अरे हाँ, मैं बूढ़ी हुई, मोल-भाव मुझे तो अब ज्यादा करना भी नहीं आता।"–कहते हुए दादी के पोपले मूँह में ज़रा-सी मुस्कुराहट भी फूट निकली।

रोहिणी ने दादी से कहा–"दादी, इससे पूछो तुम इस शहर में और भी कभी आये थे या पहली ही बार आये हो? यहाँ के निवासी तो तुम हो नहीं!"

दादी ने इस कथन को दोहरने की चेष्टा की ही थी कि मिठाईवाले ने उत्तर दिया–"पहली बार नहीं, और भी कई बार आ चुका हूँ।"

रोहिणी चिक की आड़ ही से बोली–"पहले यही मिठाई बेचते हुए आये थे या और कोई चीज़ लेकर?"

मिठाईवाला हर्ष, संशय और विस्मयादि भावों में डूबकर बोला–"इससे पहले मुरली लेकर आया था; और उससे पहले खिलौना लेकर।"

रोहिणी का अनुमान ठीक निकला। अब तो वह उससे और भी कुछ बातें पूछने के लिए अधीर हो उठी। वह बोली–"इन व्यवसायों में तुम्हें क्या मिलता होगा?"

वह बोला–"मिलता तो भला क्या है? यही खाने-भर को मिल जाता है। कभी नहीं भी मिलता है। पर हाँ, संतोष और धीरज और कभी-कभी असीम सुख जरूर मिलता है। और यही मैं चाहता हूँ।"

"सो कैसे? वह भी बताओ।"

"अब व्यर्थ मैं उन बातों की चर्चा क्यों करूँ? उन्हें आप जाने ही दें। उन बातों को सुनकर आपको दुख होगा।"

"जब इतना बताया है, तब और भी बता दो। मैं बहुत उत्सुक हूँ। तुम्हारा हर्ज न होगा। और भी मिठाइयाँ मैं ले लूँगी।"

अतिशय गंभीरता के साथ मिठाईवाले ने कहा–"मैं भी अपने नगर का एक प्रतिष्ठित आदमी था। मकान, व्यवसाय, गाड़ी-घोड़े, नौकर-चाकर, सभी कुछ था। स्त्री थी, छोटे-छोटे दो बच्चे भी थे। मेरा वह सोने का संसार था। बाहर संपत्ति का वैभव था, भीतर सांसारिक सुख था। स्त्री सुंदरी थी, मेरी प्राण थी। बच्चे ऐसे सुंदर थे, जैसे सोने के सजीव खिलौने। उनकी अठखेलियों के मेरे घर में कोलाहल मचा रहता था। समय की गति! विधाता की लीला! अब कोई नहीं है। दादी, प्राण निकाले नहीं निकले। इसीलिए अपने उन बच्चों की खोज में निकला हूँ। वे सब अंत में होंगे तो यहीं कहीं। आखिर कहीं जन्मे ही होंगे। उस तरह रहता, तो घुल-घुलकर मरता। इस तरह सुख-संनोष के साथ मरूँगा। इस तरह के जीवन से कभी-कभी अपने उन बच्चों की एक झलक-सी मिल जाती है। ऐसा जान पड़ता है, जैसे वे इन्हीं में उछल-उछलकर हँस-खेल रहे हैं। पैसों की कमी थोड़े ही है! आपकी दया से पैसे तो काफ़ी हैं। जो नहीं है, इस तरह उसीको पा जाता हूँ।"

रोहिणी ने अब मिठाईवाले की ओर देखा। देखा, उसकी आँखें आँसुओं से तर हैं।

इसी समय चुन्नू-मुन्नू आ गये। रोहिणी से लिपटकर, "अम्मा, मिठाई!"

"मुझसे लो" कहकर तत्काल काग़ज़ की दो पुड़ियों में मिठाइयाँ भर मिठाईवाले ने चुन्नू-मुन्न को दे दी।

रोहिणी ने भीतर से पैसे फेंक दिये।

मिठाईवाले ने पेटी उठायी और कहा–"अब इस बार ये पैसे न लूंगा।"

दादी बोली–"अरे-अरे न-न, अपने पैसे लिये जा भाई।"

किंतु तब तक आगे उसी प्रकार मादक, मृदुल स्वर में सुनाई पड़ा– "बच्चों को बहलानेवाला, मिठाईवाला"

अभ्यास

'मिठाईवाला' कहानी का सारांश लिखिए।

प्रस्तुत कथा 'मिठाईवाला' लेखक भगवती प्रसाद वाजपेयी जी द्वारा लिखित मानवीय संबंधों पर आधारित एक अत्यंत मार्मिक कथा है। एक खिलौनेवाला-"बच्चों को बहलानेवाला, खिलौनेवाला।" की मीठी आवाज़ के साथ गलियों में घूमता था। उसका स्नेहपूर्ण व मधुर गान सुनकर निकट के मकानों में हलचल मच जाती है। छोटे बच्चों की माताएँ खिड़कियों से झाँककर उसे देखने लगती हैं। बच्चों का झुंड उसे घेर लेता है। बच्चे खिलौने देखकर ही प्रसन्न हो जाते हैं। वे पैसे लाकर खिलौने का मोल भाव करने लगते हैं। खिलौनेवाला बच्चों के नन्हीं नन्हीं हाथों से पैसे ले लेता और उनके मनपसंद खिलौने उन्हें दे देता। तत्पश्चात् पुनः खिलौनेवाला अपनी मधुर गान गाते हुए आगे बढ़ जाता।

राम विजय बहादूर के बच्चे चुन्नू और मुन्नू भी एक दिन खिलौने खरीदकर घर लेकर आए। माँ रोहिणी बच्चों से खिलौने के दाम पूछती। बच्चे कहते हैं, "दो पैसे"। वह सोचने लगी कि खिलौनेवाला इतना सस्ता कैसे दे गया।

छह महीने बाद एक मुरलीवाला दो चार दिनों से नगर में मुरली बजाकर गाना सुनाया करता और मुरली बेचता। लोग उसे मुरली बजाने में उस्ताद मानने लगे। वह मुरली दो-दो पैसों में बेच देता था। नगर की हर गली में प्रतिदिन मुरलीवाले की चर्चा होने लगी। जब रोहिणी ने मुरलीवाले की मृदुल-मादक आवाज़ सुनी तो उसे खिलौनेवाले की याद आ गई। रोहिणी अपने पति को मुरली खरीदकर लाने के लिए भेजती है। पति विजयबाबू मुरलीवाले से मोल भाव के बहाने अनेक बातें करते हैं। आखिर दो-दो पैसों के लिए मुरली खरीदकर लाते हैं। मुरलीवाला बहुत देर तक बच्चों के झुंड में मुरलियाँ बेचता रहा। रोहिणी अपने मकान में बैठी मुरलीवाले की सारी बातें सुनती और अनुभव करती कि पहले बच्चों के साथ इतने प्यार से खिलौनेवाला ही बात करता था।

आठ महीने बाद सर्दी का मौसम था। रोहिणी अपने घर की छत पर थी। उसी वक्त नीचे गली से उसे आवाज़ सुनाई पड़ी - "बच्चों को बहलानेवाला, मिठाइवला"। जब रोहिणी ने उस मिठाईवाले की आवाज़ सुनी तो उसे वह आवाज़ परिचित-सी लगी। तुरंत नीचे आकर, दादी को कहती है "मिठाईवाले को बुला लो"। दादी मिठाईवाले को अपने पास बुलाती है। बातचीत के दौरान रोहिणी समझ लेती है कि मुरलीवाला ही अब मिठाईवाला बनकर आया है। रोहिणी उनसे मिठाइयाँ खरीदती है। उससे बात करते हुए रोहिणी को पता चलता है कि इन व्यापारों से मिठाईवाले को पैसा तो बहुत कम मिलता है, लेकिन संतोष बहुत मिलता है।

आगे, रोहिणी के बहुत पूछने पर मिठाईवाला अपनी कहानी बताता है - उसके भी परिवार, बच्चे आदि थे। वह बहुत संपन्न भी था। लेकिन क्रूर कालचक्र ने सबको इधर-उधर कर दिया। अब मिठाईवाला उनकी खोज में इधर-उधर फिरता है। वह यहाँ के बच्चों में अपने बच्चों को देखने का प्रयास करता है। ये सारी बातें कहते हुए मिठाईवाले की आँखों से आँसू निकल आते हैं। इस बीच में रोहिणी के बच्चे आ जाते हैं। मिठाईवाला बच्चों को मिठाइ देता है। मिठाइ के लिए पैसा लिये बिना ही वह जाने लगता है। उसकी आवाज़ "बच्चों को बहलानेवाला मिठाईवाला" बहुत दूर तक गूँजती रही।

4. देशभक्त

— पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र'

"स्वामिन्, आज कोई सुन्दर सृष्टि करो! किसी ऐसे प्राणी का निर्माण करो, जिसकी रचना पर हमें गौरव हो सके। क्यों?"

"सचमुच? प्रिये आज तुम्हें क्या सूझा, जो सारा धंधा छोड़कर यहाँ आयी हो और मेरी सृष्टि-परीक्षा लेने को तैयार हो?"

"तुम्हारी परीक्षा और मैं लूँगी? हरे, हरे! मुझे व्यर्थ ही काँटों में क्यों घसीट रहे हो, नाथ? यों ही बैठी-बैठी तुम्हारी अद्‌भुत रचना 'मर्त्यलोक' का तमाशा देख रही थी। जब जी ऊब गया, तब तुम्हारे पास चली आयी हूँ। अब संसार में मौलिकता नहीं दिखाई पड़ती। वही पुरानी गाथा चारों ओर दिखाई-सुनाई पड़ रही है। कोई रोता है, कोई खिलखिलाता है; एक प्यार करता है, दूसरा अत्याचार करता है; राजा धीरे-धीरे भीख माँगने लगता है और भिक्षुक शासन करने । इन बातों में मौलिकता कहाँ? इसलिए प्रार्थना करती हूँ, कोई मनोरंजक सृष्टि सँवारो। संसार के अधिकतर प्राणी तुमको शाप देते हैं, एक बार आशीर्वाद भी लो।"

"अच्छी बात है। इस समय चित्त भी प्रसन्न है। किसीसे मानव-सृष्टि की आवश्यक सामग्रियाँ यहीं मँगवाओ। बाद में तुम्हारी सहायता से सृष्टि करूँगा।"

"मैं और तुमको सहायता दूंगी! तब रहने दो। हो चुकी सृष्टि! सृष्टि करने की योग्यता यदि मुझमें होती, तो मैं तुमको कष्ट देने के लिए यहाँ आती?"

"नाराज़ क्यों होती हो भई, तुमसे पुतला तैयार करने को कौन कहता है? तुम यहाँ पर चुपचाप बैठी-भर रहो। हाँ, कभी-कभी मेरी ओर और कभी-कभी मेरी कृति की ओर अपने मधुर कटाक्ष को फेर दिया करना। तुम्हारी ही सहायता से सृष्टि में जान आ जाएगी। समझे?"

"समझी। देखती हूँ, तुम्हारी आदत भी कलियुगिये बूढ़ों-सी हुई जा रही है। अभी तक आँखों में जवानी का नशा छाया हुआ है।"

"और तुम्हारी आदत तो बहुत ही अच्छी हुई जा रही है। बूढ़े मारवाड़ियों की युवती कामिनियों की तरह जब होती है तभी 'खाँव, खाँव' किया करती हो। चलो, जल्दी करो, सब चीजे मँगाओ।"

(2)

क्षिति, जल, अग्नि, आकाश और पवन के सम्मिश्रण से विधाता ने एक पुतला तैयार किया। इसके बाद उन्होंने सबसे पहले तेज़ को बुलाकर उस पुतले में प्रवेश करने को कहा। तेज के बाद सौंदर्य, दया, करुणा, प्रेम, विद्या, बुद्धि, बल, संतोष, उत्साह, धैर्य, गांभीर्य आदि समस्त सद्‌गुणों से उस पुतले को सजा दिया। अंत में आयु और भाग्य की रेखाएँ बनाने के लिए ज्यों ही विधाता ने लेखनी उठायी, त्यों ही ब्रह्माणी ने रोका–

"सुनिये भी, इसके भाग्य में क्या लिखने जा रहे हैं? और आयु कितनी दीजिएगा?"

"क्यों? तुमको इन बातों से मतलब? तुम्हें तो तमाशाभर देखना है, वह देख लेना। भौहें तानने लगी न? अच्छा, लो, सुन लो। इसके भाग्य में लिखी जा रही है भयंकर दरिद्रता, दुख, चिंता और इसकी आयु होगी बीस वर्षों की।"

"अरे! यह आप क्या तमाशा कर रहे हैं? बल, साहस, दया, तेज, सौंदर्य, विद्या, बुद्धि आदि गुणों के देने के बाद दरिद्रता, दुख और चिंता आदि के देने की क्या आवश्यकता है? फिर, केवल बीस वर्षों की अवस्था! इन्हीं कारणों से तो मर्त्यलोक के कवि आपकी शिकायत करते हैं। क्या फिर किसीसे 'नाम चतुरानन, पै चूकते चले गये' लिखवाने का विचार है?"

विधाता ने मुस्कुराकर कहा–"अब तो रचना हो गयी! चुपचाप तमाशा-भर देखो उसकी आयु इसलिए कम रखी है कि जिस में हमें तमाशा जल्द दिखाई पड़े।"

ब्रह्माणी ने पूछा–"इसे मर्त्यलोकवाले किस नाम से पुकारेंगे?"

प्रजापति ने गर्व-भरे स्वर में उत्तर दिया–"देशभक्त।"

(3)

अमरावती से इंद्र ने, कैलास से शिव ने, वैकुंठ से कमलापति ने संसार से रंगमंच पर देशभक्त का प्रवेश उस समय देखा, जब उसकी अवस्था उन्नीस वर्ष की हो गयी। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। देवमंडली का एक-एक दिन हमारी अनेक शताब्दियों से भी बड़ा होता है। हमारे उन्नीस वर्ष तो उनके कुछ मिनिटों से भी कम थे।

देशभक्त के दर्शनों से भगवान कामारि प्रसन्न होकर नाचने लगे। उन्होंने अपनी प्राणेश्वरी पार्वती का ध्यान देशभक्त की ओर आकर्षित करते हुए कहा–"देखो, यह सृष्टि की अभूतपूर्व रचना है। कोई भी देवता देशभक्त के रूप में जाकर अपने को धन्य समझ सकता है। प्रिये, इसे आशीर्वाद दो।" प्रसन्नवदना उमा ने कहा– "देशभक्त की जय हो!" एक दिन देशभक्त के तेजपूर्ण मुखमंडल पर

अचानक कमला की दृष्टि पड़ गयी। उस समय वह (देशभक्त) हाथ में पिस्तौल लिये किसी देशद्रोही का पीछा कर रहा था। इंदिरा ने घबराकर विष्णु को उसकी ओर आकर्षित करते हुए कहा–"यह कौन है? मुख पर इतना तेज, ऐसी पवित्रता और करने जा रहे हैं राक्षसी कर्महत्या! यह कैसी लीला है, लीलाधर!"

विष्णु ने कहा–"चुपचाप देखो।"

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।

धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ।।

यदि यह देशभक्त राक्षसी काम करने जा रहा है, तो राम, कृष्ण, प्रताप, शिवा, नेपोलियन–"सबने राक्षसी कर्म किया है। देवि, इसे प्रणाम करो! यह कर्ता की पवित्र कृति है।"

हाथ की पिस्तौल देशद्रोही के मस्तक के सामने कर देशभक्त ने कहा–"मूर्ख! पश्चात्ताप कर, देशद्रोह से हाथ खोंचकर मातृसेवा की प्रतिज्ञा कर। नहीं तो मरने के लिए तैयार हो जा।"

देशद्रोही के मुख पर घृणा और अभिमान की मुस्कुराहट दौड़ गयी। उसने शासन के स्वर में उत्तर दिया–"अज्ञानी, सावधान! हम शासकों के लाडले हैं। हमारे माँ-बाप और ईश्वर, सर्वशक्तिमान सम्राट हैं। सम्राट के सम्मुख देश की बड़ाई?"

"अंतिम बार पुनः कह रहा हूँ, माता की जय बोल, अन्यथा इधर देख।" देशभक्त की पिस्तौल गरजने के लिए तैयार हो गयी।

सिर पर संकट देखकर देशद्रोही ने अपनी जेब से सीटी निकालकर ज़ोर से बजायी। जान पड़ता है, देशद्रोही के अनेक रक्षक गुप्त रूप से उसके साथ थे। देखते-देखते बीस देशद्रोहियों का दल देशभक्त की ओर लपका। फिर क्या था, देशभक्त की पिस्तौल गरज उठी! क्षण-भर में देशद्रोहियों का सरदार कबूतर की तरह पृथ्वी पर लोटने लगा! गिरफ्तार होने के पूर्व सफल प्रयत्न से देशभक्त आनंद-विभोर होकर चिल्ला उठा–"माता की जय हो!"

काँपते हुए इंद्रासन ने, पुष्पवृष्टि करते हुए नंदन-कानन ने, तांडव-नृत्य में लीन रुद्र ने, कलकल करती हुई सुर-सरिता ने एक स्वर से कहा–"देशभक्त की जय हो।"

विधाता प्रेम-गद्गद् होकर ब्रह्माणी से बोले, "देखती हो, देशभक्त के चरण-स्पर्श से अभागा कारागार अपने को स्वर्ग समझ रहा है ! लोहे की लड़ियों, हथकड़ी-बेड़ियों ने मानों पारस पा लिया है! संसार के हृदय में प्रसन्नता का समुद्र उमड़ रहा है, वसुंधरा फूली नहीं समाती! यह है मेरी कृति! यह है मेरी विभूति!! प्रिये! गाओ, मंगल मनाओ! आज मेरी लेखनी धन्य हुई!"

(4)

जिस दिन देशभक्त की जीवनी का अंतिम पृष्ठ लिखा जानेवाला था, उस दिन स्वर्गलोक में आनंद का अपार पारावार उमड़ रहा था। त्रिंशत्कोटि देवांगनाओं की थालियों को उदार कल्पवृक्ष ने अपने पुष्पों से भर दिया था, अमरावती ने अपना अपूर्व शृंगार किया था, चारों ओर मंगल-गान गाये जा रहे थे।

समय से बहुत पहले ही देवतागण विमान पर आरूढ़ होकर आकाश में विचरने और देशभक्त के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे।

* * * *

सम्राट के समर्थक भीषण शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित होकर एक बड़े मैदान में खड़े थे। देशभक्त पर सम्राट के प्रति विद्रोह का अपराध लगाकर न्याय का नाटक खेला जा चुका था। न्यायाधीश की यह आज्ञा सुनायी जा चुकी थी कि या तो देशभक्त अपने कर्मों के लिए पश्चात्ताप प्रकट कर सम्राट की जय-घोषणा करे या तोप से उड़ा दिया जाए। देशभक्त पश्चात्ताप क्यों करता? अतः उसे सम्राट के सैनिकों ने जंजीर से कसकर तोप के सम्मुख खड़ा कर दिया।

सम्राट के प्रतिनिधि ने कहा–" अपराधी! न्याय की रक्षा के लिए अंतिम बार फिर कह रहा हूँ, सम्राट की जयघोषणा कर पश्चात्ताप कर ले !"

मुस्कुराते हुए बंदी देशभक्त ने कहा–"तुम अपना काम करो, मुझसे पश्चात्ताप की आशा व्यर्थ है। तुम मुझसे सम्राट की जय कहलाने के लिए क्यों मरे जा रहे हो? सच्चा सम्राट कहाँ है? तुम्हारे कहने से संसार के लुटेरों को मैं कैसे सम्राट मान लूँ? सम्राट मनुष्यता का द्रोही हो सकता है? सम्राट न्याय का गला घोंट सकता है? सम्राट किसीके सिर पर अपना दंड ज़बरदस्ती लाद सकता है? भाई, तुम जिसे सम्राट कहते हो, उसे मनुष्यता और मनुष्यता के उपासक 'राक्षस' कहते हैं। फिर सम्राट की जय-घोषणा कैसी? तुम मुझे तोप से उड़ा दो, इसी में सम्राट का मंगल है, इसीसे उसके पापों का घड़ा फूटेगा और उसे मुक्ति मिलेगी।"

देवमंडली के बीच में बैठी हुई माता मनुष्यता की गोद में बैठकर देशभक्त ने और साथ ही त्रिंशत्कोटि देवताओं ने देखा, पंचतत्व के एक पुतले को अत्याचार के उपासकों ने तोप से उड़ा दिया। उस पुतले के एक-एक कण को देवताओं ने मणि की तरह लूट लिया। बहुत देर तक देवलोक 'देशभक्त की जय' से मुखरित रहा।

अभ्यास

'देशभक्त' कहानी का सारांश लिखिए।

श्री पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' का जन्म उत्तर प्रदेश में हुआ था। अपनी नैसर्गिक प्रतिभा और साधना से उन्होंने अपने समय के अग्रणी गद्य साहित्यकार के रूप में अपनी पहचान बनाई। उग्र जी की कहानियों की भाषा सरल, आलंकारिक तथा व्यवहारिक है। भावों के अनुरूप उनकी शैली भी व्यंग्यपरक है।

'देशभक्त' कहानी उग्रजी की एक प्रेरणाप्रद कहानी है। इसमें लेखक ने देश के लिए सर्वस्व लुटा देनेवाले नव युवक को विधाता की सर्वश्रेष्ठ कृति माना है। कहानी देवलोक के परिसर में ब्रह्मा और ब्रह्माणी के संवाद से प्रारंभ होती है। ब्रह्माणी कहती है "स्वामी आज आप कोई ऐसी सुन्दर सृष्टि कीजिए जो अलौकिक और अद्‌भुत हो।"

विधाता, ब्रह्माणि से सामग्रियों के इंतजाम करने की तथा अपनी कृपा कटाक्ष रखने के लिए कहते हैं।

विधाता ने पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और पवन जैसे पाँच तत्वों के सम्मिश्रण से मानव का एक पुतला बनाया। सर्वप्रथम उस पुतले को तेज़ी, दया, प्रेम, सौंदर्य, बल, बुद्धि, संतोष, धैर्य, गंभीरता आदि देव दुर्लभ समस्त गुणों से सजा दिया। तत्पश्चात् विधाता ने उसके भाग्य में दुःख, दरिद्रता, चिंता जैसे घोर पीड़ादायक शब्द लिखे और आयु भी केवल बीस साल की लिख दी। इससे विधात्री ने व्यंग्य करते हुए यह कहा कि आप इस सृष्टि में अभिशिप्त जीवन जीने की रेखाएँ क्यों खींच रहे हैं ? विधाता कहते हैं, "अब तो अद्‌भुत रचना हो गई है। इसका मृत्युलोक में देशभक्त नाम होगा।"

अब वह देशभक्त एक देशद्रोही के पीछे दौड़कर उसे पकड़ लेता है और उसे 'माता की जय' बोलने के लिए कहता है। मगर देशद्रोही अपने सम्राट का गुणगान करता है। तेजस्वी युवक उसे पिस्तौल से ढेर कर देता है। देशद्रोहियों का सरदार देशभक्त के हाथों मारा जाता है। देशभक्त गिरफ्तार हो जाता है। देशभक्त युवक पर सम्राट के विरूद्ध द्रोह का आरोप लगाकर पश्चात्ताप प्रकट करने का नाटक खेला जाता है। न्यायाधीश आज्ञा देते हैं कि या तो देशभक्त अपने कर्मों के लिए पश्चात्ताप प्रकट करें या उसे तोप से उड़ा दिया जायेगा। मगर देशभक्त ने विदेशी सम्राट के सामने पश्चात्ताप प्रकट करने के बजाय मृत्यु को वरण करना उचित समझा।

ऐसा देशभक्त युवक जब कारागार में पहुँचा तो कारागार भी अपने आप को धन्य समझने लगा था। वह अपने आपको स्वर्ग के समान पवित्र और महान समझने लगा था। देशभक्त युवक को देखकर संपूर्ण जगत, मृत्युलोक और देवलोक सभी आनंदमय थे। ऐसे देव दुर्लभ गुणों से संपन्न देशभक्त अपने देश के लिए, अपनी मातृभूमि के लिए बलिदान होने जा रहा था। स्वर्गलोक में खुशियों की लहर दौड़ रही थी।

अंततः, देशभक्त को जंजीरों से बाँधकर तोप से उड़ा दिया जाता है। उस पुतले के एक-एक कण को देवता अनमोल मणि की तरह अपने पास रख लेते हैं और बहुत देर तक देवलोक में देशभक्त का जयघोष होता रहता है।

लेखक 'उग्र' ने देशभक्त कहानी के माध्यम से देशवासियों को और विशेष रूप से युवा वर्ग को कठिन परिस्थितियों में भी देश सेवा के पथ पर अग्रसर होने की प्रेरणा दी है।

5. पाँच मिनट !

- मोहनलालजी महतो 'वियोगी'

बस, पाँच मिनट ! वह सीखचों के उस पार हथकडियों से जकड़ा हुआ और मैं-हाय भाग्य !-मैं पुलिस के पहरे में बाहर खड़ी, काँपती हुई, थर-थराती हूँ। बस, पाँच मिनट की मुलाक़ात थी-देखते-देखते समाप्त हो गयी !

पिछली बातों की याद क्यों करूँ ? वे छुरी बनकर मेरे हृदय में चुभ जाती हैं। पिछली गाथा किसे सुनाऊँ ! कोई मन लगाकर सुननेवाला नहीं; यदि कोई सुनता है भी तो अनमना होकर, बेमन से। सुनकर कहता है 'बहिन, तुम्हारा भाग्य ! ईश्वर को याद करो।' हाय ! दुर्भाग्यग्रस्त अभागों को कभी ईश्वर ने सहायता नहीं पहुँचायी, डूबते हुए को ईश्वर ने कभी सहारा नहीं दिया, भूखों को कभी ईश्वर ने रोटी नहीं दी, रोनेवालों के आँसू पोंछने वह कभी नहीं आया। वह स्वर्ग के नंदनवन में विहार करनेवाला है। वह अपनी स्त्री का आज्ञाकारी है। जिसपर लक्ष्मी रीझती है उसीपर ईश्वर भी अनुग्रह करता है। मुझ दरिद्र से उसका क्या नाता ? गरीबों का ईश्वर है उनका दुर्भाग्य ! मैं दुर्भाग्य की पाली, बदकिस्मती की लाड़ली ईश्वर को क्यों पुकारूँ ? पुकारती भी हूँ, तो अपने दुर्भाग्य को। वह आता है और एक न एक नया पहाड़ सिर पर ठेलकर खिलखिला पड़ता है, मगन हो जाता है, थिरक उठता है।

एक बार दुर्भाग्य को पुकारा तो एक बेकार, ग़रीब ग्रैजुएट से गठबंधन कराके वह बगलें बजाने लगा, दूसरी बार उसे पुकारा तो दो बच्चे हुए, तीसरी बार पुकारा तो मेरा अपना जीवन-सर्वस्व, डूबते का सहारा, तिनका खून के जुर्म में जेल चला गया-फाँसी की सज़ा हो गयी। सब समाप्त हो गया। अब उसे क्यों पुकारूँ ?

यदि गरीबी ही समस्त अपराधों की जड़ है तो दे दो उसे फाँसी, उसे गोली से उड़ा दो, कुत्तों से नुचवा डालो। पर मैं कहूँगी-वह खूनी नहीं, दरिद्र है; अपराधी नहीं, भूखा है; हत्यारा नहीं, विपदग्रस्त है। उसे पापी मत कहो, भूखा कहो।

क्या किया था उसने ? कौन-सा पाप किया उसने ? कुछ नहीं-कुछ नहीं ! फ़कत पापी पेट के लिए, दरिद्र परिवार के लिए, अभागे बच्चों के लिए कुछ प्रयत्न किया था। कानून ने इसी प्रयत्न को; दुर्भाग्य ने इसी चेष्टा को 'खून' का अपराध बना दिया, फाँसी की व्यवस्था कर दी। परवाह नहीं। मैं साहसपूर्वक कहती हूँ-परवाह नहीं; वह मरे-फाँसी पर लटक जाए, पर मुझे संतोष है, वह अपराधी नहीं है। सौ बार, हज़ार बार कहती हूँ-पापी नहीं; वह दरिद्र है, आभागा है, पर है मनुष्य।

भूख के मारे कुसंग में पड़ गया। चोरियाँ कीं, डाके डाले, लूटा मारा, सब कुछ किया पर पेट के लिए ही। नैतिक दृष्टि से वह अपराधी है, पापी है, खूनी है डाकू है। पर ज़रा सोचो तो क्या केवल संसार में नैतिकता ग़रीबों के ही बाँटे पड़ी है? रामधन तेली गाँव-भर के खेतों को कर्ज दे-देकर हथिया रहा है; सैकड़ों बच्चे मर रहे हैं उसके सूद की तीखी धार में पड़कर। यह पाप नहीं है, और पाप है मेरे ग़रीब पति का एक छोटा-सा अपराध! खैर, उसे संसार से हटा दो। पर इससे क्या पाप का द्वार बंद हो जाएगा? कभी नहीं। मैं कहती हूँ-हरगिज़ नहीं।

(2)

कल मुझे एक पत्र मिला-सरकारी। मेरा पति मुझसे मुलाक़ात करना चाहता है-अंतिम मुलाक़ात। वह परसों फाँसी पा जाएगा। उसकी अंतिम इच्छा है-अपने बच्चों को देखेगा, स्त्री को देखेगा। मैं अपने पति के अंतिम दर्शन करने चली। चली अपने प्राणेश्वर की जीवित लाश को देखने। मैं जिसे देखने चली उसके संबंध में यह जानती थी कि उसके सिर पर काल की छाया पड़ चुकी है, उसके गले के लिए रस्सी बट चुकी है, उसके लिए कफ़न खरीदा जा चुका है; पर वह आज जीवित है, हमारी और आपकी तरह-आश्चर्य!

आप सोचिये-आपका सर्वाधिक प्रिय काल का ग्रास बना बैठा है, आप उसे देखने जाते हैं। आज जिसे आप देख रहे हैं, कल सुबह उसकी लाश आपको मिल जाएगी, जिसका गला रस्सी के फंदे से घोंट डाला गया है। मैं कानून को दोषी नहीं ठहराती, मैं न्याय पर आक्रमण नहीं करती, पर मनुष्यता से पूछती हूँ- 'बोलो बहिन, एक बार बोलो! न्याय मूक है, बधिर है, अंध है, उसके सामने जिसे उपस्थित किया जाएगा वह उसकी परीक्षा कर लेगा। पर तुम तो हृदय रखती हो- मेरी ओर से कुछ तो बोलो!'

मैं चली-अपनापन बिसारकर चली। सोचा, एक बार चरणों को चूम लूँगी, एक बार उनकी छाती में सिर छिपाकर रोऊँगी और पूछूँगी- 'देव! मेरी प्रतीक्षा भी करोगे? भूल तो नहीं जाओगे? इसी अभागी ने तुम्हारी चढ़ती हुई जवानी में आग के दहकते हुए अंगारे रख दिये, तुम्हारे यौवन के प्याले में विष घोल दिया। क्षमा कर देना, भूल जाना। यह तुम्हारा बच्चा है इसे दुलार लो, एक बार पितृस्नेह के शीतल जल से इसे अभिषिक्त कर दो। यह तुम्हारी धरोहर है।' मैं चल पड़ी जेल की ओर। गोद में बच्चा था गोपाल। बोला-अम्मा, कहाँ जाती है? क्या उत्तर देती? क्या कहकर उस मासूम को समझाती? कहा-बेटा, बाबूजी को देखने नहीं चलोगे? वे तुम्हें देखना चाहते हैं।'

गोपाल प्रसन्न होकर बोला-अम्मा, बहुत दिनों से बाबूजी नहीं आये खिलौने माँगूँगा; पैसे माँगूँगा। मुन्नी को एक भी खिलौना नहीं दूँगा। बाबूजी हैं; वे मुन्नी के कौन होते हैं' मेरा हृदय शतधा विभक्त हो गया हाय रे अभागा बच्चा! तेरे बाबूजी काल की गोद में बैठे हैं, जीवन समय को उँगलियों पर गिन रहे हैं। पिंजड़े में बंद हैं। साहस करके बोली-बेटा भगवान की याद करो।

गोपाल मेरा अंचल खींचकर बोला-बाबूजी कब आवेंगे? साय मार आऊँगा! तुम मना मत करना; वे मेरे लिए छोटी-सी साइकिल लावेंगे जयगोविंद की है। अम्मा, वह मुझे साइकिल छूने नहीं देता। कहता है टूट जाएगी। क्या छूने से साइकिल टूट जाती है? बड़ा बदमाश लड़का है। मोदी को भी अपनी साइकिल छूने नहीं दूंगा-मेरी स्लेट तोड़ दी उसने मना करने पर दाँत काटने लगती है। मैं बाबूजी से कह दूंगा।

(3)

जेलर ने आज्ञा दे दी- 'ले जाओ।' एक सिपाही लेकर साथ चला दोनों ओर कोठरियाँ, मोटे-मोटे सीखचें और उसमें बंद ईश्वर की श्रेष्ठ सृष्टि के श्रेष्ठतर नमूने मनुष्य! एक-दो-चार नहीं, सौ। संसार में अकेले मैं अभागिनी नहीं हूँ, हज़ारों हैं, लाखों हैं!

एक अंधेरी कोठरी के सामने खड़ी की गयी। गोपाल डर के मारे में पैरों में लिपटकर खड़ा हो गया। वह काँप रहा था, सिकुड़ा जाता था।

सिपाही ने पुकारा- 'प्रकाश!'

मैंने चारों ओर देखा। यह फाँसी-घर है। अपने जीवन की अंतिम घड़ियों के कैदी यहीं रहते हैं। इस घर को यदि बोलने की शक्ति प्राप्त हो जाए तो संसार को एक ऐसा साहित्य पढ़ने को मिले, जिसकी तुलना में दूसरा साहित्य ठहर ही नहीं सकता। इस कोठरी की ईंट-ईंट ऐसे ही लोगों की आहों से पकी है; भट्टे की आग तो निमित्त मात्र ही थी। इसके जमा पर कितने आँसू सूखे होंगे, उन्हें यदि जमा किया जाए तो संसार के आमसभ्यताभिमानी उसमें डूब जाएँ। इस कोठरी पर मौत रीझ गयी है। हरे, हरे! कोठरी के भीतर से आवाज़ हुई-झन, झन, झन! एक दुबला, थका हुआ, हताश, अर्धमृत युवक दरवाज़े पर आकर खड़ा हो गया। यही था उस अन्धकूप में रहनेवाला 'प्रकाश', मेरे अन्धकारमय भविष्य का अन्तिम प्रकाश, अपने गोपाल का प्रकाश और प्यारी बच्ची मुन्नी का प्रकाश!

सिपाही ने कहा- 'पाँच मिनिट का समय है, बातें कर लो। हाँ, जल्दी, देर न हो।'

मुझे दूर हटकर खड़ा होने का हुक्म हुआ। मैं कैदी को कुछ दे न दूँ, यह भय था। मैंने देखा-उसका चेहरा बालों से भरा हुआ है, सिर के बिखरे बाल और लंबी दाढ़ी और मूँछें। आँखें धंस गयी हैं, शरीर सूखकर बाँतरा बन गया है। मैंने कहा- 'गोपाल, बाबूजी को प्रणाम करो।' पाल-हक्का-बक्का बच्चा गोपाल-भूमि से सिर लगाकर प्रणाम करने लगा। मैंने भी प्रणाम किया। वह धुंधले प्रकाश में खड़ा था- उस पार! रुंधे हुए से वह बोला- सु...खी........हो। यह अंतिम भेंट है, यह अंतिम आशीर्वाद है, आखिरी बातचीत है। बस, कल सुबह आकर मेरी लाश ले जा मैंने जेलर को कह दिया है।' मैं सिर थामे बैठ गयी।

गोपाल बोला- 'बाबूजी, चलो न।' मानों किसीने मेरे हृदय पर हर एक मुक्का मार दिया- "कैसा भोलाभाला आग्रह है वह बोला- 'बेटा, दूसरी दुनिया का यात्री हूँ। तुम पढ़ना। अम्मा को कष्ट न देना।' मैंने देखा कि उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी। गोपाल ने फिर कहा- 'बाबूजी, मुन्नी रोती है। मेरी स्लेट तोड़ दी। दूसरी स्लेट खरीद दो।' प्रकाश ने एक लंबी साँस छोड़कर कहा- 'सुनती हो, गोपाल को एक स्लेट खरीद दो।'

मैं क्या बोलती, मुझे तो ऐसा ही जान पड़ा कि मानों मेरे दोनों कान बहरे हो गये। आँखों के आगे अन्धेरा छा गया।

उसने फिर कहा- 'अच्छी तरह रहना; बच्चों को प्यार से रखना और गोपाल को पढ़ाती रहना। मैं तो अब चला; पर गोपाल को अपनी थाती रखे जाता हूँ। चिन्ता मत करो। जो होना था, होकर ही रहा।'

मैं बोली- 'और...और...'

कण्ठ रुंध गया-आँखों से मानों कलेजे का खून आँसू बनकर गिरने लगा।

सिपाही बोला- 'बस, चलो पाँच मिनट हो गये! 'वह बोला' अच्छा, विदा! एक बार मेरी ओर से गोपाल को चूम लो-मैं देख लूँ। परमात्मा तुम्हें धैर्य दे। अगले जन्म में मिलूँगा।'

सिपाही गुर्राकर बोला- 'जल्दी करो, समय समाप्त हो गया; चलो।'

अभ्यास

'पाँच मिनट' कहानी का सारांश लिखिए।

कहानीकार मोहनलाल महतो 'वियोगी' का जन्म 1902 में हुआ था। वे दशकों तक अपनी प्रखर प्रतिभा से हिंदी साहित्य की विभिन्न विधाओं को निष्ठापूर्वक समृद्ध करते रहे।

'पाँच मिनट' कहानी द्वारा वियोगी ने मानवता तथा न्याय व्यवस्था पर कठोर प्रहार किया है। कहानी का सारांश इस प्रकार है:-

एक स्त्री को सरकार से एक पत्र मिलता है कि - जेल में कैद रहनेवाला उसका पति उससे अंतिम मुलाकात करना चाहता है। दो दिन बाद उसे फाँसी पर चढ़ानेवाले है। पति की अंतिम इच्छा थी कि उसे अपने बच्चे और पत्नी को देखना।

वह स्त्री अपने दुर्भाग्य को कोसती हुई यह कहती है कि उसका पति निरपराधी है। लेकिन स्त्री की बातों को कोई सुननेवाले नहीं है।

युवती कहती है, "जब मैंने एक बार भगवान से प्रार्थना की तो भगवान ने मुझे एक बेकार, गरीब, पुरुष से संबंध जोड़ दिया। दूसरी बार प्रार्थना करने पर दो बच्चों को मेरे पाले में डाल दिया और तीसरी बार प्रार्थना करने पर मेरा अपना सर्वस्व डूबने के सहारे को खून के जुर्म में जेल भेज दिया और उस जुर्म के लिए फाँसी भी दे दी।"

युवती कहती है कि भगवान से कहने या पूछने से कोई फ़ायदा नहीं। युवती का वाद है कि उसके पति ने पेट के लिए अपराध किया। युवती पूछती है कि क्या नैतिकता मात्र गरीबों के लिए है? पति को कल फाँसी पर चढ़ानेवाले हैं। इसलिए वह अपने बच्चों को साथ लेकर पति को देखने जाती है। जेल में युवती अन्य अपराधियों को देखती है। वह समझती है कि इस संसार में अकेली वह अभागिन नहीं है। जेल में अपने पति से मुलाकात करती है। उसे सिर्फ़ पाँच मिनट का समय दिया जाता है। उसका नाम 'प्रकाश' है। अंधकार में रहनेवाला प्रकाश। एक दो शब्द बोलते ही पाँच मिनट समाप्त हो जाता है।

इस कहानी में युवती के द्वारा सामाजिक व्यवस्था में रहनेवाली कमियों के बारे में लेखक कहते हैं।

6. अब्बूख़ाँ की बकरी

- डा. ज़ाकिर हुसैन

कहानीकार का परिचय :

[डॉ. ज़ाकिर हुसैन प्रसिद्ध समाज सेवी, गाँधीवादी थे। उन्होंने राष्ट्रपति के पद को भी शोभित किया है। आप जामिया मिलियाँ शिक्षण संस्था के आधार स्तंभ थे तथा महात्मा जी के सिद्धान्तों को साकार करने वाले शिक्षा विद् थे।

इस कहानी में स्वतंत्रता के सही मूल्य का परिचय दिया है। आजकल कई लोगों की स्वतंत्रता उच्छृंखलता के लिए कभी कभी मार्ग खोल देती है तो उसका परिणाम विपरीत होता है।

शिक्षा प्रद कहानी है। सरल सुबोध शैली है।]

कहानी :

हिमालय पहाड़ का नाम तो तुमने सुना ही होगा। उससे बड़ा पहाड़ दुनियाँ में कोई नहीं है। हज़ारों मील फैलता चला गया है और ऊँचा इतना है कि इसकी ऊँची चोटियों पर कोई आदमी आसानी से नहीं पहुँच सकता। इस पहाड़ के अन्दर बहुत-सी बस्तियाँ भी बसी हैं। ऐसी ही एक बस्ती अलमोड़ा है।

अलमोड़ा में एक बड़े मियाँ रहते थे। उनका नाम था अब्बूख़ाँ। उन्हें बकरियाँ पालने का बहुत शौक़ था। अकेले आदमी थे; बस, एक-दो बकरियाँ रखते, दिन-भर उन्हें चराते। उनके अजीब-अजीब नाम रखते, किसी का कल्लू, किसी का गुजरी, किसी का हुकमा। इनसे न जाने क्या-क्या बातें करते रहते और शाम के वक्त बकरियों को लाकर घर में बाँध देते। अलमोड़ा पहाड़ी जगह है, इसलिए अब्बूख़ाँ की बकरियाँ भी पहाड़ी नस्ल की होती थीं।

अब्बूख़ाँ ग़रीब थे, बड़े बदनसीब। उनकी सारी बकरियाँ कभी न कभी रस्सी तुड़ाकर रात को भाग जाती थीं। पहाड़ी बकरी बँधे-बँधे घबड़ा जाती हैं। ये बकरियाँ भागकर पहाड़ में चली जाती थीं। वहीं कहीं एक भेड़िया रहता था, वह उन्हें खा जाता था। मगर अजीब बात है, न अब्बूख़ाँ का प्यार, न शाम के दाने का लालच, उन बकरियों को भागने से रोकता था, न भेड़िये का डर। इसकी वजह शायद यह हो कि पहाड़ी जानवरों के मिजाज में आज़ादी की बहुत प्यास होती है। यह अपनी आज़ादी किसी दाम देने को राजी नहीं होते, दुख और मुसीबतों को सहकर भी आज़ाद रहने को आराम और आनंद की कैद से अच्छा जानते हैं।

जहाँ कोई बकरी भाग निकली और अब्बूखाँ बेचारे सिर पकड़कर बैठ गये। उनकी समझ में ही न आता था कि हरी-हरी घास में उन्हें खिलाता हूँ, छिपा-छिपाकर पड़ोसियों के धान के खेत में उन्हें छोड़ देता हूँ, शाम को दाना देता हूँ, मगर फिर भी ये कम्बख्त नहीं ठहरतीं और पहाड़ में जाकर भेड़िये को अपना खून पिलाना पसन्द करती हैं।

जब अब्बूखाँ की बहुत-सी बकरियाँ भाग गयीं, तो बेचारे बहुत उदास हुए और कहने लगे– अब बकरी न पालूँगा। ज़िन्दगी के थोड़े दिन और हैं, बे-बकरियों ही के कट जाएँगे।

मगर तनहाई बुरी चीज़ है, थोड़े दिन तो अब्बूखाँ बे-बकरियों के रहे. फिर न रहा गया। एक दिन कहीं से एक बकरी खरीद लाये। यह बकरी अभी बच्ची ही थी, कोई साल-सवा साल की होगी। अब्बूखाँ ने सोचा कि कम-उम्र की बकरी लूँगा तो शायद रह जाए और उसे जब पहले ही से अच्छे-अच्छे चारे-दाने की आदत पड़ जाएगी, तो फिर वह पहाड़ का रुख न करेगी।

यह बकरी थी बहुत खूबसूरत, रंग उसका बिलकुल सफ़ेद था। बाल लंबे-लंबे थे, छोटे-छोटे, काले-काले सींग ऐसे मालूम होते थे कि किसी ने आबनूस की काली लकड़ी में खूब मेहनत से तराश कर बनाये हैं। लाल-लाल आँखें तुम देखते तो कहते कि अरे, यह बकरी हमने ली होती। वह बकरी देखने ही में अच्छी न थी, मिज़ाज की भी बहुत अच्छी थी। प्यार से अब्बूखाँ के हाथ चाटती थी। दूध चाहे तो कोई बच्चा दुह ले, न लात मारती थी, न दूध का बर्तन गिराती। अब्बूखाँ तो बस, उसपर आशिक़-से हो गये थे। उसका नाम चाँदनी रखा था और दिन-भर उससे बातें करते रहते थे। कभी-कभी चाचा घसीटाखाँ का क़िस्सा उसे सुनाते थे, कभी मामू नत्थू का।

अब्बूखाँ ने यह सोचकर कि बकरियाँ शायद मेरे तंग आंगन में घबड़ा जाती हैं, अपनी उस चाँदनी बकरी के लिए नया प्रबन्ध किया था। घर के बाहर उनका एक छोटा-सा खेत था। उसके चारों तरफ़ उन्होंने न जाने कहाँ-कहाँ से काँटे जमा करके डाले थे कि कोई उसमें न आ सके। उसके बीच में चाँदनी को बाँधते थे और रस्सी खूब लंबी रखी थी कि खूब इधर-उधर घूम सके। इस तरह चाँदनी को अबूखाँ के यहाँ खासा ज़माना गुज़र गया, और अब्बूखाँ को यक़ीन हो गया कि आखिर एक बकरी तो मिल गयी, अब यह न भागेगी।

मगर अब्बूखाँ धोखे में थे। आज़ादी की ख्वाहिश इतनी आसानी से दिल से नहीं मिटती। पहाड़ और जंगल में रहनेवाले आज़ाद जानवरों का दम घर की चहारदीवारी में घुटता है, तो काँटों से

घिरे हुए खेत में भी उन्हें चैन नसीब नहीं होता। कैद-कैद सब एक-सी। थोड़े दिन के लिए चाहे ध्यान बँट जाए, मगर फिर पहाड़ और जंगल याद आते हैं और कैदी अपनी रस्सी तुड़ाने की फ़िक्र करता है। अब्बूखाँ का ख्याल ठीक न था कि चांदनी पहाड़ की हवा भूल गयी है।

एक दिन सुबह जब सूरज अभी पहाड़ के पीछे ही था कि चाँदनी ने पहाड़ की तरफ़ नज़र की। मुँह जो जुगाली की वजह से चल रहा था, रुक गया और चाँदनी ने दिल में कहा-वे पहाड़ की चोटियाँ कितनी खूबसूरत हैं, वहाँ की हवा और यहाँ की हवा का क्या मुकाबिला। फिर वहाँ उछलना, कूदना, ठोकरें खाना और यहाँ हर वक्त बँधे रहना। गर्दन में आठों पहर यह रस्सी! ऐसे घरों में गधे और खच्चर भले ही चुग लें, पर हम बकरियों को तो ज़रा बड़ा मैदान चाहिए।

इस ख्याल का आना था और चाँदनी अब वह पहली चाँदनी ही न थी। न उसे हरी-हरी घास अच्छी लगती थी, न पानी मजा देता था। रोज़-ब-रोज़ दुबली होने लगी। दूध घटने लगा। हर वक्त मुँह पहाड़ की तरफ़ रहता। रस्सी को खींचती और चिल्लाती। अब्बूखाँ समझ गये, हो न हो, कोई बात ज़रूर है, लेकिन यह समझ में नहीं आता था कि क्या? एक दिन चाँदनी ने उनकी तरफ़ मुँह फेरा और अपनी बकरियोंवाली ज़बान में कहा-अब्बूखाँ मियाँ, मैं अब तुम्हारे पास रहूँगी, तो मुझे बड़ी बीमारी हो जाएगी। मुझे तो तुम पहाड़ ही में चली जाने दो।

अब्बूखाँ बकरियों की ज़बान समझने लगे थे। चिल्लाकर बोले-या अल्लाह! यह भी जाने को कहती है, यह भी! हाथ के थरथराने से मिट्टी की लुटिया, जिसमें दूध दुहा था, हाथ से गिरी और चूर-चूर हो गयी।

अब्बूखाँ वहीं घास पर बकरी के पास बैठ गये और ग़मगीन आवाज़ से बोले-"क्यों बेटी चाँदनी, तू भी मुझे छोड़ना चाहती है?"

चाँदनी ने जवाब दिया-"हाँ", "अब्बूखाँ मियाँ, चाहती तो हूँ।"

अब्बूखाँ-अरे, क्या तुझे चारा नहीं मिलता या दाना पसन्द नहीं? बनिये ने घुने दाने मिला दिये हैं? मैं आज ही और दाना ले आऊँगा।

चाँदनी-नहीं नहीं मियाँ, दाने की कोई तकलीफ़ नहीं। अब्बूखाँ-तो फिर क्या रस्सी छोटी है, मैं और लंबी कर दूँगा। चाँदनी ने कहा-इससे क्या लाभ? अब्बूखाँ-तो फिर क्या बात है? तू चाहती क्या है? चाँदनी-कुछ नहीं, बस, मुझे तो पहाड़ में जाने दो।

अब्बूखाँ ने कहा-अरी कम्बख़्त! तुझे यह खबर है कि वहाँ भेड़िया रहता है? वह जब आएगा, तो क्या करेगी?

चाँदनी ने जवाब दिया-अल्लाह ने दो सींग दिये हैं, उनसे उसे मारूँगी।

अब्बूखाँ-हाँ हाँ, ज़रूर! भेड़िये पर तेरे सींगों ही का असर होगा। वह तो मेरी कई बकरियाँ हड़प कर चुका है। उनके सींग तुझसे बहुत बड़े थे। तू तो कल्लू को जानती नहीं थी, वह यहाँ पिछले साल थी। बकरी काहे को थी, हिरन थी, हिरन। काला हिरन। रात-भर सींगों से भेड़िये के साथ लड़ी, मगर फिर सुबह होते-होते उसने दबोच ही लिया और खा गया। चाँदनी ने कहा-अरे रे रे। बेचारी कल्लू, मगर खैर, अब्बूखाँ मियाँ, इससे क्या होता है? मुझे तो तुम पहाड़ में जाने ही दो।

अब्बूखाँ-कुछ झुंझलाये और बोले-या अल्लाह, यह भी जाती है। मेरी एक बकरी और उस कम्बख़्त भेड़िये के पेट में जाए, मगर नहीं नहीं, मैं इसे तो ज़रूर बचाऊँगा। कम्बख़्त, अहसान-फ़रामोश, तेरी मर्जी के खिलाफ़ तुझे बचाऊँगा। अब तो तेरा इरादा मालूम हो गया है। अच्छा, बस, चल! तुझे कोठरी में बाँधा करूँगा, नहीं तो मौक़ा पाकर चल देगी।

अब्बूखाँ ने आखिर चाँदनी को एक कोने की कोठरी में बंद कर दिया और ऊपर से जंजीर चढ़ा दी; मगर गुस्से में कोठरी की खिड़की बंद करना भूल गये। इधर उन्होंने जंजीर चढ़ायी, उधर चाँदनी खिड़की में से उचककर बाहर।

चाँदनी पहाड़ पर पहुँची, तो उसकी खुशी का क्या पूछना था! पहाड़ पर पेड़ उसने पहले भी देखे थे, मगर आज उनका और ही रंग था। उसे ऐसा मालूम होता था कि सबके सब खड़े हुए उसे बधाई दे रहे हैं कि फिर हममें आ मिली।

इधर-उधर सेवती के फूल मारे खुशी के खिलखिलाकर हँस रहे थे। कहीं ऊँची-ऊँची घास उससे गले मिल रही थी। मालूम होता था कि सारा पहाड़ मारे खुशी के मुस्कुरा रहा है। और अपनी बिछुड़ी हुई बच्ची के वापस आने पर फूला नहीं समाता। चाँदनी की खुशी का हाल कोई क्या बतावे? न चारों तरफ़ काँटों की बाड़, न खूटा, न रस्सी। और चारा- वे जड़ी-बूटियाँ! अब्बूखाँ ग़रीब अपनी सारी मुहब्बत और स्नेह के होते हुए भी न ला सकते।

चाँदनी कभी इधर उछलती, कभी उधर। कभी चट्टान पर है, कभी खड्ड में। इधर ज़रा फिसली, फिर सँभली। एक चाँदनी के आने से सारे पहाड़ में रौनक़-सी आ गयी थी। ऐसा मालूम होता था कि अब्बूखाँ की दस-बारह बकरियाँ छूटकर यहाँ आ गयी हैं।

एक दफ़ा घास पर मुँह मारकर जो ज़रा सिर उठाया तो चाँदनी की नज़र अब्बूखाँ के मकान और उस काँटोंवाले घेरे पर पड़ी। उन्हें देखकर यह खूब हँसी और दिल में कहने लगीं-कितना ज़रा-सा मकान है। मैं इतने दिन उसमें कैसे रही! उसमें आखिर समाती कैसे थी। पहाड़ की चोटी पर से उस नन्हीं-सी जान को नीचे सारी दुनिया नज़र आती थी।

चाँदनी के लिए यह दिन भी अजीब था। दोपहर तक इतनी उछल-कूद की जो शायद सारी उम्र में न की होगी। दोपहर ढले, उसे पहाड़ी बकरियों का एक गल्ला दिखायी दिया। गल्ले की बकरियों ने उसे खुशी-खुशी अपने पास बुलाया और उससे हाल-अहवाल पूछा। गल्ले में कुछ जवान बकरे भी थे, उन्होंने भी चाँदनी की बड़ी खातिर-तवाज़ा की, बल्कि उसमें एक बकरा था, ज़रा काले-काले रंग का, जिसपर कुछ सफ़ेद टप्पे थे। यह चाँदनी को भी अच्छा लगा और यह दोनों बहुत देर तक इधर-उधर फिरते रहे। उनमें न जाने क्या-क्या बातें हुईं। और कोई तो था नहीं, एक सोता का पानी का बह रहा था, उसने सुनी होगी। कभी कोई वहाँ जाए और उस सोते से पूछे, तो शायद कुछ पता लगे। और फिर भी क्या खबर, वह सोता भी शायद न बताए।

खैर, बकरियों का गल्ला तो न मालूम किधर चला गया। वह जवान बकरा भी इधर-उधर घूमकर अपने साथियों में जा मिला।

शाम का वक्त हुआ। ठंडी हवा चलने लगी। सारा पहाड़ लाल-सा हो गया और चाँदनी ने सोचा, ओह हो, अभी से शाम!

नीचे अब्बूखाँ का घर, और वह काँटोंवाला घेरा दोनों कुहरे में छिप गये। नीचे कोई चरवाहा अपनी बकरियों को बाड़े में बन्द करने के लिए जा रहा था, उनकी गर्दन की घंटियाँ बज रही थीं। चाँदनी उस आवाज़ को खूब पहचानती थी। उसे सुनकर उदास-सी हो गयी। होते-होते अँधेरा होने लगा और पहाड़ में एक तरफ़ से आवाज़ आयी-खूँ-खूँ।

यह आवाज़ सुनकर चांदनी को भेड़िये का ख्याल आया। दिन-भर एक दफ़ा भी उसका ध्यान उधर न गया था। पहाड़ के नीचे से एक सीटी और बिगुल की आवाज़ आयी। यह बेचारे अब्बूखाँ थे,

जो आखिरी कोशिश कर रहे थे, कि उसे सुनकर चाँदनी फिर लौट आये। इधर से वह कह रहे थे, "लौट आ, लौट आ।" उधर से दुश्मन-जान भेड़िये की आवाज़ आ रही थी।

चाँदनी के जी में कुछ तो आयी कि लौट चलें, लेकिन उसे खूँटा याद आया, रस्सी याद आयी, काँटों का घर याद आया और उसने सोचा कि उस जिन्दगी से यहाँ की मौत अच्छी। आखिर सीटी और बिगुल की आवाज़ बन्द हो गयी। पीछे से पत्तों की खड़खड़ाहट सुनायी दी। चाँदनी ने मुड़कर देखा तो दो आँखें अंधेरे में चमक रही थीं। भेड़िया पहुँच गया था।

भेड़िया ज़मीन पर बैठा था, नज़र बेचारी बकरी पर जमी थी। बकरी ने जो उसकी तरफ़ देखा, तो वह मुस्कुराया और बोला-ओह ओ! अब्बूखाँ की बकरी है। खूब खिला-पिलाकर मोटा किया है। यह कहकर उसने अपनी लाल-लाल ज़बान अपने नीले-नीले होंठों पर फेरी। चाँदनी को कल्लू की कहानी याद आयी। उसने सोचा कि मैं क्यों रात-भर लड़कर सुबह जान दूँ? अभी क्यों न अपने को सुपुर्द कर दूँ? मगर फिर ख्याल किया कि नहीं। अपना सिर झुकाया, सींग आगे को किये और पैंतरा बदलकर भेड़िये के सामने आयी कि बहादुरों का यही स्वभाव है।

कुछ देर जब गुज़र गयी तो भेड़िया बढ़ा। चाँदनी ने भी सींग सँभाले और वह हमले किये कि भेडिया ही जानता होगा। दसों मरतबा उसने भेड़िये को पीछे रेल दिया। सारी रात इसीमें गुज़री। कभी-कभी चाँदनी ऊपर आसमान की तरफ़ देख लेती और सितारों से आँखों-आँखों में कह देती-ऐ! कहीं इसी तरह सुबह हो जाए!

सितारे एक-एक करके गायब हो गये। चाँदनी ने आखिरी वक्त में अपना ज़ोर दुगुना कर दिया। भेड़िया भी तंग आ गया था कि दूर से एक रोशनी-सी दिखायी दी। एक मुर्गे ने कहीं से बाँग दी। चाँदनी ने दिल में कहा कि अल्लाह तेरा शुक्र है; मैंने अपने बस-भर मुकाबिला किया, अब तेरी मरजी।

चाँदनी बेदम ज़मीन पर गिर पड़ी। उसका सफेद बालों का लिबास खून से बिलकुल सुर्ख था। भेड़िये ने उसे दबोच लिया और खा गया।

और, दरख्त पर चिड़ियाँ बैठी देख रही थीं। उनमें इसपर बहस हो रही है कि जीत किसकी हुई? बहुत कहती हैं कि भेड़िया जीता गया। एक बूढ़ी-सी चिड़िया है, वह कहती है– चाँदनी जीती।

अभ्यास

'अब्बूखाँ की बकरी' कहानी का सारांश लिखिए।

डॉ. ज़ाकिर हुसैन प्रसिद्ध समाज सेवी, गाँधीवादी थे। उन्होंने राष्ट्रपति के पद को भी शोभित किया है। आप जामिया मिलियाँ शिक्षण संस्था के आधार स्तंभ थे तथा महात्मा जी के सिद्धान्तों को साकार करने वाले शिक्षा विद् थे।

अलमोड़ा में एक बड़े मियाँ रहते थे। उनका नाम था अब्बूखाँ। उन्हें बकरियाँ पालने का बड़ा शौक था। उनकी बकरियाँ पहाड़ी नस्ल की होतीं थीं। वे बकरियाँ कभी न कभी रस्सी तुड़ाकर रात को पहाड़ की ओर भाग जाती थीं। पहाड़ी बकरियाँ बँधे-बँधे घबड़ा जाती थीं।

उस पहाड़ी पर एक भेड़िया रहता था। वह उन्हें खा जाता था। अब्बूखाँ का प्यार, दाने का लालच, बकरियों को रोक न सकता था। उन्हें आज़ादी प्रिय लगती थी। इस प्रकार, अब्बूखाँ की बहुत-सी बकरियाँ भाग गयीं और भेड़िये के शिकार हो गयीं। इससे अब्बूखाँ दुखी रहते थे और उन्होंने बकरियाँ पालना भी छोड़ दिया।

मगर, तनहाई बुरी चीज़ है। कम उम्र की बकरी लेकर पालने का निश्चय किया। एक बकरी ली, बहुत खूबसूरत और उसका रंग बिलकुल सफेद था। खूब सोच-विचारकर अब्बूखाँ ने उसका नाम चाँदनी रखा। उसकी देखभाल की। खासा ज़माना गुज़र गया। अब्बूखाँ को यकीन हो गया कि अब यह न भागेगी। मगर अब्बूखाँ धोखे में थे। आज़ादी की इच्छा इतनी आसानी से दिल से नही मिटती।

एक दिन सुबह चाँदनी ने पहाड़ी की तरफ़ नज़र की। खूब सोचकर, वहाँ जाने का निश्चय किया। फिर अब्बूखाँ से नज़र बचाकर जंगल की ओर भाग गयी। फिर क्या था, अब्बूखाँ सिर मारे, कुटिया के आगे बैठ गये। सारा दिन चाँदनी इधर-उधर घूमती रही। पेट भर खा लिया और अन्य बकरियों के साथ घूमती-फिरती रही।

शाम का वक्त आया। अन्य बकरियाँ अपनी-अपनी जगह लौटने लगीं। लेकिन चाँदनी के मन में लौटने की इच्छा नहीं थी। बार-बार अब्बूखाँ की आवाज़ सुनायी पड़ी। चाँदनी को गुलामी का जीवन पसन्द नहीं था, उसे आज़ादी प्रिय चीज़ थी।

रात हुई। जंगल का भेड़िया इधर-उधर घूमने लगा। उसकी नज़र चाँदनी पर पड़ी। दोनों में वार पर वार होने लगे। भेड़िया भी तंग आ गया। चाँदनी खूब घायल हुई। उसने अपने बस-भर मुकाबला किया। उसके सफेद बालों का लिबास खून से बिलकुल सुर्ख था। सबेरे के होते-होते भेड़िये ने चाँदनी को दबोच लिया और खा गया।

इस कहानी में स्वतंत्रता के सही मूल्य का परिचय दिया गया है। मरकर भी चाँदनी ने अपनी आज़ादी को बनाये रखा।

भाग - 5

जीवनी

			पृष्ठ
1.	ईश्वरचन्द्र विद्यासागर	...	172
2.	पंडित मदनमोहन मालवीय	...	178
3.	नेताजी सुभाषचंद्र बोस	...	186
4.	रवीन्द्रनाथ ठाकुर	...	190
5.	पंडित दीनदयाल उपाध्याय	...	196
6.	लाल बहादुर शास्त्री	...	200
7.	राजगोपालाचारी	...	203

1. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

(1)

संसार में धन और विद्या दोनों का संयोग बहुत कम देखा जाता है। जो विद्वान होता है वह प्रायः धनी नहीं होता। जिसके पास धन होता है उसमें विद्या के प्रति अभिरुचि नहीं होती। पंडित ईश्वरचंद्र विद्यासागर के विषय में यह कथन सौ फी सदी सत्य प्रतीत होती है। वे विद्वान थे। उनकी विद्वत्ता की सर्वत्र धाक थी। पर वे सदा धन के अभाव में रहे। लक्ष्मी ने उनपर कभी कृपा दृष्टि नहीं की।

ईश्वरचंद्र का जन्म बंगाल के एक गाँव में एक निर्धन परिवार में हुआ था। उनके पिता एक गरीब ब्राह्मण थे। इसलिए वे ईश्वरचंद्र की पढ़ाई-लिखाई की कोई उचित व्यवस्था नहीं कर सके। उन्हें अपने गाँव की छोटी पाठशाला में पढ़ने के लिए भेज दिया। ईश्वरचंद्र की बुद्धि बहुत तीव्र थी। पाठ उन्हें बहुत शीघ्र याद हो जाते थे। कुछ ही समय में उन्होंने पाठशाला की सारी पढ़ाई पूरी कर ली। उनकी स्मरण शक्ति इतनी अच्छी थी कि वे जिस पाठ को एक बार सुन लेते थे उसे कभी नहीं भूलते थे।

ईश्वरचन्द्र के पिता एक साधारण नौकरी करते थे। एक बार ईश्वरचंद्र अपने पिता के साथ कलकत्ता जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने मील के पत्थरों पर अंग्रेजी में 1, 2, 3, आदि नंबर लिखा देखा। उन्हें झट अंग्रेजी के अंक याद हो गये। कलकत्ता पहुँचकर उन्होंने अपने पिता को बताया कि वे अंग्रेजी के अंक पहचान सकते हैं और स्लेट पर सारे अंक लिखकर पिता को दिखा दिये। पिता अपने पुत्र की बुद्धिमानी देखकर बहुत प्रसन्न हुए।

कलकत्ते में लोगों ने सलाह दी कि ईश्वरचंद्र को अंग्रेजी स्कूल में पढ़ने के लिए भेजिए। पर उनके पिता ने कहा' मेरे पास इतना धन कहाँ है कि मैं अपने लड़के को अंग्रेजी पढ़ाऊँ? अंग्रेजी स्कूलों में मोटी रकम फ़ीस के रूप में देनी पड़ती है। उतनी फ़ीस देने के लिए मेरे पास रुपये कहाँ से आयेंगे?' पर उनकी बड़ी इच्छा थी कि बेटा पढ़े और पढ़-लिखकर विद्वान बने। इसलिए उन्होंने ईश्वरचंद्र को पढ़ने के लिए संस्कृत पाठशाला में भेज दिया। वहाँ पढ़ाई मुफ्त में होती थी, फ़ीस नहीं देनी पड़ती थी। उस समय ईश्वरचंद्र की आयु केवल आठ वर्ष की थी। ग्यारह वर्ष की आयु में उन्होंने व्याकरण की परीक्षा पास कर ली। उसके पश्चात् वे साहित्य पढ़ने लगे। सोलह वर्ष की अवस्था में उन्होंने साहित्य और अलंकार की पढ़ाई पूरी कर ली। इसके बाद उन्होंने वेदों, स्मृतियों और दर्शन-ग्रन्थों की पढ़ाई आरंभ की। कुछ ही वर्षों में वे सब शास्त्रों के ज्ञाता हो गये। परीक्षाओं में वे सबसे अधिक अंक पाते थे और सदैव प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होते थे। उनकी विद्वत्ता देखकर जनता ने उन्हें 'विद्यासागर' की उपाधि दी। तबसे, वे ईश्वरचंद्र विद्यासागर नाम से प्रसिद्ध हो गये। वास्तव में वे विद्या के सागर थे।

(2)

जिस समय विद्यासागर ने अपनी पढ़ाई समाप्त की, उसी समय कलकत्ते में संस्कृत कालेज की स्थापना हुई। उस कालेज में बहुत-से विद्यार्थी पढ़ने आते थे। ईश्वरचंद्र की विद्वत्ता देखकर सरकार भी बहुत प्रभावित हुई। उसने उनको उस कालेज का अध्यापक नियुक्त कर दिया। वहाँ उन्हें एक सौ पचास रुपया वेतन मिलने लगा। ईश्वरचंद्र के पिता की नौकरी बहुत छोटी थी। उन्हें बहुत कम रुपये मिलते थे और वे बहुत कष्ट से जीवन निर्वाह करते थे। जब ईश्वरचंद्र को नौकरी मिली तब उन्होंने अपने पिताजी से कहा अब आप अपनी नौकरी छोड़ दीजिए। अब मैं आपका उचित ढंग से पालन-पोषण करूँगा। पुत्र की बात मानकर पिता ने अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया और अपने गाँव चले गये।

ईश्वरचंद्र बहुत योग्य अध्यापक थे। खूब मेहनत करते थे। मन लगाकर अपने छात्रों को पढ़ाते थे। इसलिए कालेज के अध्यापक और छात्र सब उनका बड़ा आदर करते थे। सब उनसे प्रसन्न रहते थे। एक बार सरकार ने कालेज की पढ़ाई के संबंध में एक रिपोर्ट लिखने को उनसे कहा। उन्होंने बहुत अच्छी रिपोर्ट तैयार करके दी। उसपर प्रसन्न होकर सरकार ने उनको उसी कालेज का प्रधान अध्यापक बना दिया। उस समय हमारे देश पर विदेशी सरकार का शासन था।

प्रधान अध्यापक के पद से उन्होंने अपना कार्य बहुत अच्छी तरह निभाया। वे समय पालन और अनुशासन पर बहुत ध्यान देते थे। छात्रों तथा अध्यापकों में अनुशासन की कमी उन्हें तनिक भी पसन्द नहीं आती थी। जो अध्यापक समय का पालन नहीं करते और पढ़ाई में ढिलाई दिखाते थे उन्हें कालेज से बाहर कर दिया जाता था। कालेज के एक प्राध्यापक प्रायः नित्य ही विलंब से कालेज आते थे। विद्यासगर प्रति दिन उन्हें विलंब से आते देखते थे। उनको देखकर प्रणाम करते और चुप रह जाते। कुछ बोलते नहीं थे। विद्यासागर के इस मौन बर्ताव से प्रोफेसर साहब बहुत घबराये। उन्होंने जाकर विद्यासागर से क्षमा माँगी और उस दिन से समय पर कालेज आने लगे।

(3)

विद्यासागर बड़े निर्भीक और स्वतंत्र विचार के पुरुष थे। बड़े-बड़े अफसरों से भी डरते नहीं थे। कलकत्ते के हिन्दू कालेज के प्रधान अध्यापक एक अंग्रेज साहब थे। वे हिन्दुस्तानियों से घृणा करते थे और उन्हें तुच्छ समझते थे। एक बार किसी कार्यवश विद्यासागर उनसे मिलने गये। प्रिन्सपल साहब अपने कमरे में बैठे हुए सिगरेट पी रहे थे। उनके दोनों पैर टेबुल पर फैले हुए थे। साहब ने उसी दशा में विद्यासागर को अंदर बुला लिया और उनसे बातें की। उन्हें बैठने के लिए कुरसी भी नहीं दी। विद्यासागर को उनका व्यवहार बहुत बुरा लगा, पर उन्होंने कुछ कहा नहीं। अपनी बात पूरी करके घर चले आये।

कुछ दिनों के बाद प्रिन्सपल साहब को कुछ जरूरी काम से विद्यासागर के घर आना पड़ा। जब विद्यासागर को मालूम हुआ कि प्रिन्सपल साहब उनसे मिलने आये हैं तब उन्होंने सोचा-पिछली बार प्रिन्सिपल साहब ने मेरा अपमान किया था। आज उसका बदला लेना चाहिए। बस, वे भी एक टेबुल पर अपने पैर फैला कर बैठ गये। एक सिगरेट जलाकर हाथ में रख लिया। प्रिन्सिपल साहब के बैठने के लिए कोई कुरसी भी नहीं रखी।

विद्यासागर को टेबुल पर पैर फैलाकर बैठे हुए देखा तो साहब आग बबूला हो गये। उनका चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। घर पहुँचकर उन्होंने शिक्षा विभाग के अधिकारियों से शिकायत कर दी। लिखा कि विद्यासगर बड़ा घमण्डी आदमी है। उसे तौर तरीक़ा कुछ नहीं मालूम । उसने मेरा अपमान किया है। उसको दण्ड मिलना चाहिए। अन्त में शिकायत गवर्नर साहब तक पहुँची। गवर्नर ने विद्यासागर से सफ़ाई माँगी। उत्तर में विद्यासागर ने लिखा-'महाशय, हम काले लोग हैं। गोरे लोगों की सभ्यता से परिचित नहीं हैं। कुछ दिन पूर्व हम प्रिन्सिपल साहब से मिलने उनके घर गये थे। तब उन्होंने इसी प्रकार मेरा स्वागत किया था। मैंने समझा, अंग्रेजों के यहाँ भले लोगों का स्वागत करने का यही बढ़िया तरीका है। इसलिए प्रिन्सिपल साहब के स्वागत में मैंने उन्हीं की नकल की थी। यदि इसमें कोई भूल हुई है तो दोष मेरा नहीं। दोष प्रिन्सिपल साहब का ही है। भलेआदमियों के स्वागत का यह नया तरीका मैंने उनसे ही सीखा था।'

इस सफ़ाई को पढ़कर गवर्नर साहब खूब हँसे। उन्होंने प्रिन्सिपल साहब को बुलाकर बहुत डाँटा-डपटा और कहा कि तुम जाकर विद्यासागर से क्षमा माँगो। उन्होंने जाकर विद्यासागर से क्षमा माँगी । उस दिन से दोनों मित्र बन गये।

(4)

विद्यासागर बड़े स्वाभिमानी व्यक्ति थे। वे ऐसा कोई कार्य नहीं करते जिससे उनके स्वाभिमान को चोट पहुँचे। एक बार शिक्षा विभाग के इन्सपेक्टर से किसी बात पर उनका झगड़ा हो गया। इसपर उन्होंने कालेज की नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया। मित्रों ने बहुत मना किया कि नौकरी मत छोड़ो। इससे तुम्हें तकलीफ़ होगी। पर उन्होंने नहीं माना। किसी ने उनसे पूछा- 'नौकरी छोड़ दोगे तो करोगे क्या?' विद्यासागर ने उत्तर दिया- "नौकरी छोड़ दूँगा तो तरकारी बेचूँगा। मोची की दूकान रखूँगा। लेकिन ऐसी नौकरी नहीं करूँगा जिसमें इज्जत चली जाय। नौकरी बड़ी है या इज़्ज़त?"

इतने बड़े होने पर भी विद्यासागर बहुत सादा रहते थे, सादे कपडे पहनते थे और सबके साथ सरलता का बर्ताव करते थे। वे मोटे कपड़े पहनते थे और पैरों में मामूली चप्पल पहनकर सब जगह आते जाते थे।

एक बार किसी गाँव के लोगों ने उन्हें अपने यहाँ भाषण देने के लिए बुलाया। विद्यासागर एक छोटे से स्टेशन पर गाड़ी से उतरे। साँझ का समय था। उसी गाड़ी से एक नवयुवक भी उतरा।

वह कोट पैन्ट पहना था और गले में टाइ बाँधा था। उसके पास एक छोटा सूटकेस था। गाड़ी से उतरते ही उसने 'कूली-कुली' पुकारना शुरू किया। पर स्टेशन छोटा था और वहाँ कोई कूली नहीं था। नवयुवक बहुत नाराज़ हुआ और स्टेशन मास्टर से कहा-सुनी करने लगा। कूली न रखने के लिए उसे बुरा-भला कहना आरंभ किया।

नवयुवक की परेशानी देखकर विद्‌यासागर उसके पास गये। बोले–'आप घबराइए नहीं, मैं आपका सामान ले चलता हूँ। कहिए आपको कहाँ जाना है?' नवयुवक ने सोचा यह कोई कूली या गरीब आदमी है। उसने कहा 'अच्छा, ले चलो, मैं तुमको अच्छी मज़दूरी दूँगा।' नवयुवक आगे-आगे चला और विद्‌यासागर उसका सूटकेस लेकर उसके पीछे-पीछे चले। उस नवयुवक को भी उसी गाँव में जाना था जहाँ विद्‌यासागर को जाना था। घर पहुँचकर नवयुवक विद्‌यासगर को पैसे देने लगा। पर विद्‌यासागर ने पैसे नहीं लिये। तब उसको बड़ा अचरज हुआ।

दूसरे दिन उसी गाँव में एक सभा आयोजित की गयी। उसमें विद्‌यासागर का भाषण होनेवाला था। सभा में बड़ी भीड़ थी। लोग विद्‌यासागर का स्वागत कर रहे थे और उन्हें मालाएँ पहना रहे थे। नवयुवक भी सभा में आया। उसने देखा कि लोग जिस व्यक्ति को मालाएँ पहना रहे हैं और जिसका स्वागत कर रहे हैं वह वही आदमी है जो उसका सूटकेस उठाकर ले आया था। यह देखकर लज्जा के कारण उसका सिर नीचे झुक गया। सभा समाप्त होने पर वह विद्‌यासागर के पास गया और उनके चरण छूकर उनसे क्षमा माँगी। विद्‌यासागर ने कहा–'क्षमा माँगने की आवश्यकता नहीं। हमको अपना काम स्वयं करना चाहिए। दूसरों पर निर्भर रहना उचित नहीं है। यही सबसे बड़ी शिक्षा है।'

(5)

विद्‌यासागर विद्‌या के सागर तो थे ही, वे दया के भी समुद्र थे। वे जितने बड़े विद्वान थे उतने ही बड़े दयालु और उदार भी थे। दुखियों का दुख देखकर उनका हृदय पिघल जाता था।

एक बार एक छोटा बालक उनके पास आया और एक आना पैसा माँगा। विद्‌यासागर ने पूछा–'तुम भीख क्यों माँगते हो?' लड़के ने उत्तर दिया–'मैं गरीब हूँ। मेरे पिता नहीं हैं। भीख माँगकर अपना गुजर करता हूँ।' उसकी बात सुनकर विद्‌यासागर ने कहा–'यदि मैं तुमको चार आने दूँ तो तुम क्या करोगे?' लड़के ने कहा- मैं दो आने के चने खरीदकर खाऊँगा और शेष दो आने अपनी माँ को दूँगा। विद्‌यासागर ने फिर पूछा–'यदि मैं तुमको आठ आने दूँ तब तुम क्या करोगे?' लड़का बोला–'चार आने से घर के लिए खाना ख़रीदूँगा और बाकी चार आने से मूँगफली ख़रीदकर बेचूँगा। उससे जो लाभ होगा उससे व्यापार करूँगा।' लड़के का उत्तर सुनकर विद्‌यासागर बहुत प्रसन्न हुए उन्होंने उसको एक रुपया दिया। लड़का प्रणाम करके चला गया।

इस घटना के कई वर्ष बीत गये। एक दिन विद्‌यासागर बाजार से होकर गुजर रहे थे। इतने में एक नवयुवक उनके सामने आया। उसने हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया और कहा–'महाराज! आप

कृपा करके मेरी दूकान पर पधारिये। मैं आप ही की कृपा और आशीर्वाद से आदमी बन गया हूँ।'

विद्यासागर उस घटना को भूल गये थे। उन्होंने उस नवयुवक को नहीं पहचाना। उन्होंने उससे पूछा-'तुम कौन हो? तुम क्यों मुझे अपनी दूकान पर ले जाना चाहते हो? मैं तुमको जानता नहीं।'

तब नवयुवक ने अपने बचपन की वह घटना सुनायी। उसने कहा-'आपने दया करके मुझे जो एक रुपया दिया था उसी से मैंने व्यापार आरंभ किया। धीरे-धीरे मैंने अपनी पूंजी बढ़ाई। अब मैंने यह दूकान खड़ी की है। मुझे नित्य आठ दस रुपये का लाभ इस दुकान से हो जाता है। इसलिए यह दूकान आप ही की देन है।' वह विद्यासागर को अपनी दूकान पर ले गया और उनकी खूब ख़ातिर की, विद्यासागर उसको आशीर्वाद देकर वहाँ से विदा हुए।

(6)

सरकारी नौकरी से इस्तीफ़ा देने के बाद विद्यासागर साहित्य और समाज की सेवा में अपने दिन बिताने लगे। उन्होंने संस्कृत और बंगला में अनेक पुस्तकें लिखीं। बच्चों को संस्कृत और बंगला भाषाएँ सिखाने के लिए सरल शैली में रीडरें लिखीं। उनकी रीडरें बहुत लोकप्रिय हुईं और लाखों बालक बालिकाओं ने उनसे भाषा सीखी।

विद्यासागर के प्रयत्न से बंगाल में सैकड़ों स्कूलों की स्थापना हुई। लाखों बच्चे जो अब तक अशिक्षित थे, पढ़ना लिखना सीखने लगे। उनके पहले बंगाल में संस्कृत और बंगला सिखाने के लिए स्कूल नहीं थे। स्कूलों में बालक बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा दी जाती थी। स्कूलों के अध्यापकों का वेतन विद्यासागर अपने पास से या मित्रों की सहायता से देते थे।

विद्यासागर एक अच्छे समाज सुधारक भी थे। वे विधवा-विवाह के बहुत बड़े समर्थक थे। उनके एक मित्र एक कालेज में प्राध्यापक थे। बहुत वृद्ध और दुर्बल थे। उनकी सेवा करनेवाला कोई नहीं था। इसलिए उन्होंने एक जवान लड़की से विवाह करने का निश्चय किया। विद्यासागर ने उस विवाह का विरोध किया। पर प्रोफेसर साहब को तो विवाह करने की धुन सवार हो गयी थी। बंगाल में बहुत पहले से दहेज की प्रथा प्रचलित थी। निर्धन लोग दहेज से बचने के लिए अपनी लड़कियों का विवाह वृद्ध पुरुषों से कर देते थे। प्रोफेसर साहब ने विद्यासागर की बात नहीं मानी और एक लड़की से विवाह कर लिया।

एक दिन प्रोफेसर साहब विद्यासागर को अपने घर ले गये। विद्यासागर ने जब प्रोफ़ेसर साहब की पत्नी को देखा तो वे फूट फूटकर रोने लगे। उसकी छोटी उमर और प्रोफ़ेसर साहब का बुढ़ापा देख कर विद्यासागर का मन दया से पिघल गया। उसी दिन से उन्होंने विधवा-विवाह का प्रचार करना आरंभ कर दिया। बंगाल के लोगों ने उनका बहुत विरोध किया, पर वे अपनी बात पर अडिग रहे। उन्होंने अपने इकलौते बेटे का विवाह एक विधवा कन्या से किया।

विद्वान होकर भी विद्‌यासागर बहुत नम्र थे, विनयशील थे। संस्कृत में एक कहावत है-'विद्या ददाति विनयं' विद्वान को विनयशील होना चाहिए। यह गुण विद्‌यासागर में पूर्ण रूप से विद्‌यमान था।

अभ्यास

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर की जीवनी का सारांश लिखिए।

ईश्वरचन्द्र का जन्म बंगाल के एक निर्धन परिवार में हुआ था। उनके पिता एक गरीब ब्राह्मण थे। इसलिए वे ईश्वरचन्द्र की पढ़ाई की कोई उचित व्यवस्था नहीं कर सके। ईश्वरचन्द्र बहुत बुद्धिमान थे। उनकी स्मरण शक्ति इतनी तीव्र थी कि वे जिस पाठ को एक बार सुन लेते थे उसे कभी नहीं भूलते थे। ईश्वरचन्द्र के पिता कलकत्ते में एक साधारण नौकरी करते थे। अंग्रेजी स्कूल की मोटी फीस देकर पढ़ाना उनसे संभव नहीं था, पर उनकी बड़ी इच्छा थी कि बेटा पढ़-लिखकर विद्वान बने। इसलिए उन्होंने ईश्वरचन्द्र को पढ़ने के लिए संस्कृत पाठशाला में भेज दिया। 11 वर्ष की आयु में उन्होंने व्याकरण की परीक्षा तथा 16 वर्ष की आयु में उन्होंने साहित्य और अलंकार की पढ़ाई समाप्त कर ली। इसके बाद वे वेदों, स्मृतियों और दर्शन-ग्रंथों को पढ़कर सब शास्त्रों के ज्ञाता बन गये। उनकी विद्वत्ता देखकर जनता ने उन्हें 'विद्यासागर' की उपाधि दी। तब से वे ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के नाम से प्रसिद्ध हो गयें।

विद्यासागर अपनी पढ़ाई की समाप्ति के बाद कलकत्ते के संस्कृत कॉलेज में अध्यापक नियुक्त हुए। वे एक योग्य व मेहनती अध्यापक थे। इसलिए कॉलेज के अध्यापक और सब छात्र उनका बड़ा आदर एवं सम्मान करते थे। उनकी योग्यता से प्रभावित होकर सरकार ने उन्हें कॉलेज का प्रधान अध्यापक बना दिया।

प्रधान अध्यापक के पद से उन्होंने अपना कार्य बहुत अच्छी तरह निभाया। वे समय पालन और अनुशासन पर बहुत ध्यान देते थे।

विद्यासागर बडे स्वाभिमानी, निर्भीक और स्वतंत्र विचार के व्यक्ति थे। बड़े-बड़े अफसरों से भी नहीं डरते थे। एक बार विभाग के निरीक्षक से किसी बात पर उनका झगड़ा हो गया। इस पर उन्होंने कॉलेज की नौकरी से इस्तीफ़ा दे दिया। उनका यह मानना था कि ऐसी नौकरी नहीं करनी चाहिए जिसमें इज़्ज़त चली जाय।

विद्यासागर इतने बड़े पद पर होने पर भी बहुत सरल रहते थे, साधारण कपड़े पहनते थे और सबके साथ सरलता से व्यवहार करते थे। उनका कहना था कि 'हमें अपना काम स्वयं करना चाहिए। दूसरों पर निर्भर रहना उचित नहीं है। यही सबसे बडी शिक्षा है।' विद्यासागर विद्या के सागर थे ही, वे दया के भी धनी थे। वे जितने बड़े विद्वान थे उतने ही बड़े दयालु और उदार भी थे। दुखियों का दुःख देखकर उनका हृदय पिघल जाता था।

सरकारी नौकरी से इस्तिफा देने के बाद विद्यासागर साहित्य और समाज की सेवा में अपने दिन बिताने लगे। उन्होंने संस्कृत और बंगला में अनेक पुस्तकें लिखीं तथा उनके प्रयत्न से बंगाल में सैकड़ों स्कूलों की स्थापना हुई। स्कूलों में बालक-बालिकाओं को निःशुल्क शिक्षा दी जाने लगी।

विद्यासागर एक अच्छे समाज सुधारक भी थे। वे विधवा-विवाह के बहुत बड़े समर्थक थे। बंगाल के लोगों ने इसका बहुत विरोध किया, पर वे अपनी बात पर अडिग रहे।

संस्कृत में एक कहावत है-"विद्या ददाति विनयं' अर्थात् 'विद्वान को सदा विनयशील होना चाहिए।' यह गुण विद्यासागर में पूर्ण रूप से विद्यमान था।

2. पंडित मदनमोहन मालवीय

(1)

आपने काशी के हिन्दू विश्वविद्यालय का नाम अवश्य सूना होगा। उसके संस्थापक कौन थे? उसकी कल्पना किस के मन में उत्पन्न हुई थी? काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक स्व. पंडित मदन मोहन मालवीय हैं। आप हमारे देश के इने गिने नेताओं में से थे जिन्हें देश सदा याद रखेगा। उन्होंने काशी में विश्वविद्यालय की स्थापना करके अक्षय कीर्ति प्राप्त की थी।

पंडितजी बड़े ही धार्मिक, त्यागी, देशभक्त और विद्या प्रेमी पुरुष थे। वे हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्कृति का बहुत बड़े समर्थक और पोषक थे। वे एक आदर्श पुरुष, विनम्र और भगवान के सच्चे भक्त थे। वे हिन्दू धर्म के कट्टर समर्थक होने पर भी विभिन्न धर्मों के प्रति उदार थे और उनका समान रूप से आदर करते थे।

वे देश के अनन्य पुजारी थे। उनके हृदय में राष्ट्रीय भावना पूर्ण रूप से भरी थी। वे प्रारंभ से ही कांग्रेस के कार्यों में भाग लेते थे। महात्मा गाँधी उनको अपना बड़ा भाई मानते थे और उनका बड़ा आदर करते थे। जब भारत की माँगों पर विचार करने के लिए लंडन में गोल मेज़ कॉनफ़रेन्स हुई थी तब मालवीयजी भी महात्मा गाँधी के साथ लंडन गये थे और सदा गाँधीजी को अपने विचारों से सहायता पहुँचाते थे। गाँधीजी के रचनात्मक कार्यों में भी सदा गाँधी जी का समर्थन करते थे। कांग्रेस में सदा मालवीयजी का स्थान प्रमुख और देश के वरिष्ठ नेताओं में रहा। वे स्वतंत्रता संग्राम में भी सदा आगे रहते थे।

पंडित मदनमोहन मालवीय का जन्म सन् 1881 में प्रयाग की पुण्य भूमि में हुआ था। उनके पूर्वज मालवा देश से आकर प्रयाग में बस गये थे। इसीलिए उन्होंने अपने नाम के साथ मालवीय शब्द जोड़ लिया था। मालवीयजी के पिता का नाम पंडित ब्रजनाथ था। वे संस्कृत के अगाध विद्वान और एक धार्मिक व्यक्ति थे। मालवीयजी की शिक्षा घर पर ही प्रारंभ हुई। वे अपने पिता और दादा से नित्य श्लोक भजन, स्तोत्र आदि सुनते और उन्हें कंठस्थ कर लेते। उनके घर के पास ही धर्म-ज्ञानोपदेश नाम की एक संस्कृत पाठशाला थी। वे पहले पहल इसी पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजे गये। सात वर्ष की अवस्था में ही उन्हें अनेक धार्मिक और नीति संबंधी श्लोक याद हो गये थे। जब वे उन श्लोकों को सुनाना आरंभ करते तो सुननेवालों की भीड़ लग जाती थी। मालवीयजी बचपन से ही बड़े नटखट प्रकृति के थे। स्वभाव उनका बहुत चंचल था। वे पड़ोस के बच्चों के साथ गुल्ली-डंडा खेला करते थे। कुश्ती लड़ने का भी उन्हें शौक था। वे अखाड़े में जाकर कुश्ती लड़ते, मुगदर भांजते और दण्ड-बैठकें करते। इससे उनका शरीर खूब पुष्ट हो गया था। होली के दिन हाथ में रंग की

बाल्टी और पिचकारी लेकर घर से निकल जाते और जो कोई मिलता, 'उसे रंग से सराबोर कर देते थे। जन्माष्टमी के उत्सव में वे बड़े प्रेम से भाग लेते और भगवान की मूर्ति को उत्तम रीति से सजाकर सुन्दर झाँकी बनाते।

मालवीयजी जब 15 वर्ष के थे तभी उनका विवाह हो गया था। उनके संस्कृत ज्ञान पर प्रसन्न होकर एक शास्त्रीजी ने अपनी कन्या का विवाह उनसे कर दिया था।

संस्कृत का अध्ययन समाप्त कर लेने के बाद उन्हें अंग्रेज़ी पढ़ने का शौक हुआ। पर मालवीयजी का जन्म एक साधारण परिवार में हुआ था। उनके माता-पिता के कई बाल-बच्चे थे। सब लोग एक छोटे-से मकान में रहते थे जिसमें सिर्फ तीन कमरे थे और एक छोटा-सा आँगन था। मालवीयजी के पिता पंडित व्रजनाथजी कथाएँ कहते और पूजा कराते थे। इसी वृत्ति से जो कुछ आय होती उसी से सारे परिवार का गुजर चलता था। जिस परिवार में कमानेवाला एक और खानेवाले बहुत-से हों उस परिवार की स्थिति का अंदाजा आसानी से हो सकता है। पंडित व्रजनाथ जी के पास स्कूल फीस देने के लिए रुपये नहीं थे। पर वे अपने पुत्र की अंग्रेज़ी पढ़ने की इच्छा को दमन नहीं करना चाहते थे। तब मालवीयजी की माता ने अपने हाथ के कड़े एक महाजन के यहाँ गिरवी रखकर उनका नाम एक अंग्रेज़ी स्कूल में लिखा दिया। अपने छोटे-से घर में मालवीयजी को पढ़ने-लिखने की सुविधा भी नहीं मिलती थी। इसलिए वे पास के एक बगीचे में जाकर पेड़ों के नीचे बैठकर अध्ययन किया करते थे। रात्रि के समय भी लालटेन लेकर उसी बगीचे में पढ़ते और प्रायः रात को वहीं सो जाते। इस प्रकार बड़े कष्ट से उन्होंने शिक्षा समाप्त की।

18 वर्ष की उमर में मालवीयजी ने मैट्रिक परीक्षा पास कर ली। फिर वे प्रयाग के म्योर सेन्ट्रल कालेज में भर्ती हो गये। वहाँ से उन्होंने बी.ए. की परीक्षा पास की। मालवीयजी की इच्छा और आगे पढ़ने की थी। पर घर की आर्थिक अवस्था संतोषजनक नहीं थी। इसलिए कालेज की पढ़ाई समाप्त होते ही उन्हें नौकरी करने की चिन्ता सताने लगी। उन्होंने उसी स्कूल में, जिसमें वे पढ़ते थे 50 रुपये मासिक वेतन पर नौकरी कर ली। नौकरी के साथ-साथ वे कानून का अध्ययन भी करते रहे। वकालत की परीक्षा पास कर लेने के पश्चात् वे प्रयाग में वकालत करने लगे।

(2)

युवा अवस्था से ही उनमें समाज-सेवा और जन-सेवा की भावना जागृत हुई थी। स्कूल में पढ़ाई से जो कुछ समय बचता उसे वे समाज-सेवा के कार्य में लगाते। उसी समय उनके हृदय में राष्ट्रीय भावना का भी उदय हुआ था। सरकारी नौकरी करते हुए भी वे कांग्रेस में सम्मिलित हो गये और देशसेवा का व्रत ले लिया। तब से अपने जीवन के अंतिम घड़ी तक उन्होंने अपना समय देश,

धर्म और जाति की सेवा में व्यतीत किया। उनके जीवन का एक-एक क्षण सार्वजनिक कार्य में लगता था। वे अपने कष्टों की परवाह किये बिना सेवा कार्य में लगे रहते थे।

मालवीयजी का सबसे बड़ा, महत्वपूर्ण और उपयोगी कार्य था काशी में हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना। उस समय देश में जितनी संस्थाएं थीं उन्हें अंग्रेज़ी सरकार ने स्थापित की थीं। उनमें सब जगह अंग्रेज़ी भाषा, अंग्रेज़ी संस्कृति और अंग्रेज़ी साहित्य की विशेषता और महत्व को गौरव दिया जाता था। भारतीय संस्कृति और सभ्यता की उपेक्षा की जाती थी। उसके प्रभाव में आकर देश के नवयुवक अपनी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, वेश-भूषा आदि से घृणा करने लगे थे। सर्वत्र अंग्रेज़ी का बोलबाला था और पाश्चात्य सभ्यता की धाक थी। मालवीयजी को देश की यह अवस्था बहुत ख़टकती थी। उन्होंने पश्चिमी सभ्यता की चुनौती को स्वीकार करके भारतीय संस्कृति की रक्षा करने का कठिन व्रत लिया। उन्होंने भारत की पुण्य-भूमि काशी में एक विश्वविद्यालय की स्थापना करने का निश्चय किया।

मालवीयजी की कल्पना का विश्वविद्यालय एक साधारण संस्था नहीं थी। वह हिन्दुओं के उत्तम विचार, प्राचीन भारतीय संस्कृति और नवयुवकों में चरित्र निर्माण का एक महान केन्द्र था। उसके द्वारा भारत के युवकों के हृदयों में अपने देश, धर्म, संस्कृति और उच्च विचारों के प्रति आदर का भाव उत्पन्न करना था। पश्चिमी तकनीकी का अपने देश में विकास करना और देश के युवकों को व्यावहारिक ट्रेनिंग देना, उस विश्वविद्यालय का प्रथम उद्देश्य था।

इस कार्य के लिए बहुत बड़ी राशि की आवश्यकता थी। मालवीयजी ने अपने सपने को साकार बनाने के लिए अपनी सारी शक्ति लगा दी। वे भिक्षा पात्र लेकर निकल पड़े । नगर-नगर में गाँव-गाँव में वे अपनी झोली लेकर घूमने लगे और विश्वविद्यालय के लिए चंदा इकट्ठा करना आरंभ किया। वह युग राजा-महाराजाओं का था। सबने दिल खोलकर चंदा देना आरंभ किया। इस प्रकार उन्होंने संस्था के लिए लगभग दो करोड़ रुपये इकट्ठे किये जिससे विद्यालय की भव्य इमारतें बनीं। सब भवनों का पैटर्न एक-सा है। सबमें हिन्दू-संस्कृति के प्रतीक दिखायी देते हैं। मालवीयजी की धन संग्रह करने की क्षमता और युक्ति को देखकर महात्मा गाँधी भी आश्चर्य में पड़ गये थे। उन्होंने एक बार कहा था कि 'मैंने भीख माँगना अपने बड़े भाई मालवीयजी से सीखा है।'

मालवीयजी के धन-संग्रह के संबंध में एक मनोरंजक घटना है। वे सभी राजा और महाराजाओं से विश्वविद्यालय के लिए भिक्षा माँगते थे-वे हिन्दू हों या मुसलमान । सब लोग प्रेम से उन्हें चंदा देते थे।

एक बार वे हैदराबाद के नवाब से चंदा माँगने हैदराबाद गये। नवाब एक कट्टर मुसलमान थे और हिन्दू धर्म और हिन्दू संस्थाओं के प्रति उनके मन में कोई अनुराग नहीं था। उन्होंने मालवीयजी

को चंदा देना अस्वीकार कर दिया। बहुत कहने-सुनने पर भी कुछ देने को राज़ी नहीं हुए। मालवीयजी निराश होकर वहाँ से लौटे। मार्ग में उन्होंने देखा किसी धनी सेठ की अर्थी श्मशान भूमि की ओर जा रही है और उसके सगे संबंधी पीछे-पीछे रुपये पैसे लुटाते हुए जा रहे हैं। मालवीयजी भी भीड़ में शामिल हो गये और पैसे चुनने लगे। एक सज्जन ने जो उनके साथ थे पूछा– 'पंडितजी, यह क्या कर रहे हैं?' मालवीयजी ने उत्तर दिया–'भाई। विश्वविद्यालय के लिए चंदा माँगने हैदराबाद आये थे। चंदा नहीं मिला, अब खाली हाथ यहाँ से कैसे लौटूँ? लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे? दान के कुछ पैसे ही मिल जाएँ तो क्या कम है?' किसी प्रकार निज़ाम के नवाब साहब के कानों तक यह बात पहुँच गयी। वे बहुत शर्मिन्दा हुए और मालवीयजी को बुलाकर उन्हें एक अच्छी रकम भेंट की।

(3)

ईस्वी सन् 1916 के 4 फ़रवरी को वसंत पंचमी के शुभ अवसर पर काशी में पवित्र गंगा नदी के तट पर एक बहुत बड़ा समारोह हुआ। उस समारोह में सम्राट के प्रतिनिधि के रूप में वायसराय लार्ड हार्डिंग, अनेक प्रान्तों के गवर्नर, कश्मीर, जोधपुर, बीकानेर, अलवर आदि राज्यों के राजा गण और सारे भारत के विद्वान और राजनैतिक नेता पधारे थे। ये सब लोग रंग-बिरंगे वस्त्रों और आभूषणों से सज कर उस उत्सव में सम्मिलित हुए थे। भारतवर्ष में ऐसा अभूतपूर्व दृश्य पहले भी नहीं दिखायी दिया था। एक गोल मंडप बनाया गया था। उसे तोरणों और झंडियों से बहुत ही सुन्दर ढंग से सजाया गया था। मंडप में बहुमूल्य गद्दे लगे थे। उनपर सोने-चाँदी की कुर्सियाँ सजायी गयी थीं। दर्शकों की अपार भीड़ इकट्ठी थी। शुभ घड़ी में राष्ट्रीय गीत तथा वेद-मंत्रों के साथ विश्वविद्यालय का शिलान्यास हुआ। चारों ओर से पुष्प वर्षा के मध्य वायसराय ने विश्वविद्यालय की नींव रखीं। करतल ध्वनि से दिशाएँ गूंज उठीं। मालवीयजी की कीर्ति अमर हो गयी।

हिन्दू विश्वविद्यालय भारत की सबसे बड़ी संस्था है। इसमें कला, विज्ञान, डॉक्टरी, इन्जीनियरिंग आदि सभी विषयों की पढ़ाई होती है। सारे भारतवर्ष के और विदेशों के भी छात्र यहाँ आकर शिक्षा प्राप्त करते हैं । युवा अवस्था से ही मालवीयजी राजनैतिक कार्यों में दिलचस्पी लेने लगे थे। देश की सबसे बड़ी राष्ट्रीय संस्था कांग्रेस थी। इसकी स्थापना ई. सन् 1885 में देश के कुछ महापुरुषों द्वारा हुई थी। मालवीयजी सन् 1886 में कांग्रेस के साधारण सदस्य बने। सन् 1892 में प्रयाग में जब कांग्रेस का जलसा हुआ तब वे उसके स्वागत मंत्री नियुक्त हुए। सन् 1902 में वे अपने प्रान्त की व्यवस्थापिका सभा के सदस्य बने । सन् 1908 में वे लाहौर में कांग्रेस अधिवेशन के सभापति बने । सन् 1931 में महात्मा गाँधी के साथ गोल मेज़ कांफेन्स में भाग लेने इंग्लैण्ड गये। सन् 1932-33 के सत्याग्रह संग्राम में भाग लेने के कारण पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये। इस प्रकार वे जब तक जीवित रहे देश की स्वतंत्रता-आन्दोलनों में अपना हाथ बंटाते रहे।

(4)

मालवीयजी आचार-विचार और धर्म के मामले में बहुत सावधान रहते थे। छुआ-छूत का बहुत विचार रखते थे। किसी अपवित्र पुरुष का छुआ या बनाया हुआ भोजन नहीं करते थे। आवश्यकता पड़ने पर स्वयं अपना भोजन बना लेते थे। जब गोलमेज़ कांफेन्स में भाग लेने विलायत गये थे तब अपने साथ हाथ मलने के लिए शुद्ध व साफ़ मिट्टी और पीने के लिए गंगा जल अपने साथ ले गये थे। मालवीयजी और पं. मोतीलाल नेहरू दोनों घनिष्ठ मित्र थे। एक बार मोतीलाल नेहरू ने मालवीयजी को अपने यहाँ भोजन के लिए निमंत्रित किया। मालवीयजी ने निमंत्रण तो स्वीकार कर लिया पर शर्त यह रखी कि वे स्वयं अपने हाथ से भोजन बनाएँगे। किसी अन्य व्यक्ति का बनाया हुआ भोजन नहीं खाएँगे। पंडित मोतीलाल नेहरू भी ब्राह्मण थे, पर वे अंग्रेज़ी तौर तरीके और खान-पान के आदी थे। ऐसे व्यक्ति के यहाँ मालवीयजी भोजन कैसे कर सकते थे? इसलिए उन्होंने अपना भोजन स्वयं पकाने की शर्त रखी। मोतीलालजी भी उनकी शर्त मान गये। जब मालवीयजी के यहाँ भोजन करने पहुँचे तो मोतीलालजी ने स्वयं अपने हाथों से चौका लगाया।मालवीयजी भोजन बनाने बैठे तो मोतीलालजी स्वयं उनके लिए सब सामग्री जुटाते रहे। नौकर-चाकर खड़े-खड़े तमाशा देख रहे थे। मोतीलालजी ने नौकरों को कोई काम नहीं करने दिया। भोजन तैयार हो जाने पर मालवीयजी ने बड़े प्रेम से भोजन किया। इस प्रकार मालवीयजी का अतिथि सत्कार करके मोतीलाल जी भी बहुत प्रसन्न हुए।

मालवीयजी धार्मिक बातों में पुराने विचारों के समर्थक होने पर भी हरिजनों के प्रति बहुत उदार थे। एक बार वे एक चौबेजी के साथ बैठे हुए कुछ चर्चा कर रहे थे। इसी समय एक अति साधारण व्यक्ति पाँच वर्ष के एक बालक को लेकर कमरे में बिना किसी सूचना के अंदर आ गया। वह मालवीयजी के पैरों पर गिर पड़ा। फिर पंडितजी के आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए अपने बच्चे को भी उनके चरणों पर डाल दिया। मालवीयजी ने लपक कर बालक को उठाया और उसके मुँह पर हाथ फेरते हुए प्यार से उसे पुचकारा।

उसके चले जाने पर चौबेजी ने मालवीयजी से पूछा–'महाराज! वह कौन आदमी था?'

मालवीयजी ने कहा–'जानकर क्या करोगे?'

चौबेजी ने फिर पूछा। तब मालवीयजी ने मुस्कुराते हुए कहा–'मेहतर था।'

इतना सुनते ही चौबेजी उछल पड़े। दोनों कान पकड़ कर खड़े हो गये। बोले–'बुरा हुआ! बुरा हुआ! कपड़े धोने पड़ेंगे, नहाने पड़ेंगे। इस ठंडी में बुरा हाल होगा!'

चौबेजी की बातें सुनकर मालवीयजी खिल-खिला कर हँस पड़े।

(5)

मालवीयजी अजात शत्रु थे। उनके विरोधी भी कभी उनकी निन्दा नहीं करते थे। वे न कभी किसी पर क्रोध करते थे न कभी किसी का दिल दुखाते थे। सदा प्रिय वचन बोलना, सबसे प्रेम करना और सबके कष्टों को सहानुभूति के साथ समझना और उनका दुख बँटाना उनका स्वभाव-सा हो गया था। जो आदमी बड़ी से बडी भूल या अपराध कर देता उसको भी वे क्षमा कर देते। उनकी क्षमाशीलता असीम थी।

एक बार मालवीयजी अपने एक मित्र के साथ पंजाब के गवर्नर से मिलने शिमला गये। शिमला बहुत ठंडी जगह है । उनके मित्र की आदत थी कि वे रात में अपने दोनों पैर सिकोड़ कर सोते थे। मालवीयजी रात में पेशाब करने उठे तो उन्होंने देखा कि उनके मित्र पैर सिकोड़कर सो रहे हैं। उन्होंने समझा मित्र को ठंड लग रही है। उन्होंने अपना एक कंबल लाकर मित्र को ओढा दिया। पर मित्र सिकूड़े ही रहे। दूसरी बार मालवीय जी फिर पेशाब करने उठे तो मित्र को सिकुड़ा देख कर एक कंबल और उनके शरीर पर डाल दिया। तीसरी बार उठे तो तीसरा कंबल ओढ़ा दिया। अब मालवीयजी के पास एक भी कंबल नहीं रह गया; उन्होंने सर्दी खाते हुए रात बिता दी।

चोर भी मालवीयजी का आदर करता था। एक बार मालवीयजी रेल द्वारा कहीं यात्रा कर रहे थे। यात्रा लंबी थी। उनके साथ कपड़ों का एक सूटकेस था। वे प्रायः प्रथम श्रेणी में यात्रा करते थे। एक स्टेशन पर जब गाड़ी रुकी तो उनका सूटकेस किसी ने चुरा लिया। उसमें कुछ कपड़े और कुछ ज़रूरी कागजात थे। रेलवे पुलिस को रिपोर्ट कर दी गयी। पुलिस ने चोर का पता लगाने का बहुत प्रयत्न किया, पर पता न लगा। चोरी का समाचार अखबारों में भी छप गया।

कुछ दिनों के बाद मालवीयजी को एक पत्र मिला जिसमें रेल पार्सल की एक रसीद भी रखी थी। पत्र में लिखा था– 'मैंने ही आपका सूटकेस चुराया था। मुझे मालूम नहीं था कि वह सूटकेस आपका है। अख़बारों में समाचार छपा तो मुझे मालूम हुआ। उसे पढ़कर मुझे बहुत दुख हुआ। तब से मैं लज्जा और पाप के बोझ से दबा जा रहा हूँ। मैंने बड़ा पाप किया कि आप जैसे पूज्य और देशभक्त का सामान चुराया। पुलिस के भय से मैंने इसके पहले आपका सूटकेस वापस नहीं कर सका। अब मैं उसे वापस कर रहा हूँ। मेरे कारण आपको जो कष्ट हुआ उसके लिए बार-बार आपसे क्षमा माँगता हूँ।' इससे ज्ञात होता है कि बुरे लोगों के हृदयों में भी मालवीयजी के प्रति आदर का भाव था।

मालवीयजी के हृदय में दीन-दुखियों के प्रति अगाध प्रेम था। एक घटना का जिक्र यहाँ किया जाता है। मालवीयजी हिन्दू विश्वविद्यालय के उपकुलपति थे। एक बार वे एक बजे रात्रि में किसी ट्रेन से बनारस स्टेशन पर उतरे। उन्होंने देखा कि दो गुण्डे एक युवती के पीछे लगे हैं और उसे तंग

कर रहे हैं। वह स्त्री उनसे बचने का प्रयत्न कर रही है। मालवीयजी ने उन बदमाशों को डाँट कर दूर हटा दिया । फिर उस स्त्री को अपने साथ ले जाकर एक टाँगे पर बिठा दिया। जब वह बैठ गयी तब उन्होंने उसके घर का पता पूछ लिया।

स्टेशन से चलकर मालवीयजी हिन्दू कॉलेज के बोडिंग में पहुँचे और चार-पाँच हृष्ट-पुष्ट लड़कों को अपने कार में बिठाकर ले गये। उन लड़कों से उस स्त्री के घर का पता लगाने को कहा। लड़कों ने उसके घर का पता लगा लिया और जाकर दरवाजा खटखटाया। पहले तो वह स्त्री इन लड़कों को देखकर बहुत डर गयी और दरवाजा बंद कर लिया। वह सोच रही थी कि फिर वही बदमाश उसके पीछे पड़े हैं। पर जब उसे मालूम हुआ कि स्टेशन पर मालवीयजी ने उसकी रक्षा की थी और वे ही उसका समाचार जानने के लिए बाहर खड़े हैं तब वह दरवाजा खोलकर बाहर आयी और मालवीयजी के पैर छूकर प्रणाम किया और उनको धन्यवाद दिया।

(6)

देश के राष्ट्रीय नेताओं में मालवीयजी का स्थान बहुत ऊँचा है। सभी वर्गों और दलों के लोग समान रूप से उनका आदर करते हैं। शिक्षित वर्गों में उनके लिए जितना आदर है, उतना ही आदर साधारण जनता में भी है। निर्धनों और दीन दुखियों की सेवा करना वे अपना धर्म समझते थे। इस कार्य में उनको बड़ा आनन्द आता था। जब कभी उनको सेवा का अवसर मिलता वे इस कार्य में जुट जाते थे।

एक बार प्रयाग में कुंभ मेला लगा था। जाड़े के दिन थे। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। रात्रि के समय मालवीयजी को सूचना मिली कि सैकड़ों यात्री संगम पर सर्दी से परेशान हैं और कष्ट भोग रहे हैं। सूचना पाकर मालवीयजी उठे, चार-पाँच साथियों को इकट्ठा किया। लकड़ी की दूकान गये। ठेलों पर लकडियाँ लदवायीं और उन्हें लेकर संगम पर जा पहुँचे। वहाँ जाकर यात्रियों के लिए आग का प्रबंध किया। उन्होंने लोगों का कष्ट दूर करने में अपने कष्टों की तनिक भी परवाह नहीं की। रात भर इसी सेवा में लगे रहे।

सन् 1948 के नवम्बर में इस महान आत्मा ने अपना शरीर त्याग दिया। उनकी मृत्यु से सारे देश में शोक छा गया ।

अभ्यास

पंडित मदनमोहन मालवीय की जीवनी का सारांश लिखिए।

पंडित मदनमोहन मालवीय बड़े ही धार्मिक, त्यागी, देश-भक्त और विद्याप्रेमी थे। वे हिंदू धर्म और हिंदू संस्कृति का बहुत बड़े समर्थक और पोषक थे। वे एक आदर्श पुरुष, विनम्र और भगवान के सच्चे भक्त थे। वे हिंदू धर्म के कट्टर समर्थक होने पर भी विभिन्न धर्मों के प्रति उदार थे।

पंडित मदन मोहन मालवीय का जन्म 1861 में प्रयाग में हुआ था। उनके पिता का नाम व्रजनाथ था। वे संस्कृत के एक अगाध विद्वान और एक धार्मिक व्यक्ति थे।

मालवीयजी बचपन से ही बड़े नटखट प्रकृति के थे। वे जब 15 वर्ष के थे तभी उनका विवाह हो गया था। संस्कृत के अध्ययन के पश्चात् उन्हें अंग्रेज़ी पढ़ने का शौक हुआ। लेकिन इसके लिए अपेक्षित धन सुविधा नहीं थी। आखिर उनकी माँ ने अपने हाथ के कड़े बेचकर, मालवीयजी की इच्छा पूरी की। 18 वर्ष की में मालवीयजी ने दसवीं परीक्षा पास कर ली। कॉलेज की पढ़ाई के बाद उन्होंने उसी स्कूल में नौकरी कर ली। वकालत की परीक्षा पास कर लेने के पश्चात् वे प्रयाग में वकालत करने लगे। युवा अवस्था से ही उनमें समाज सेवा और जन सेवा की भावना जागृत हुई थी। सरकारी नौकरी करते हुए उन्होंने देश सेवा का व्रत ले लिया।

मालवीयजी का सबसे बड़ा महत्वपूर्ण और उपयोगी कार्य था काशी में हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना। अंग्रेज़ द्वारा स्थापित सभी संस्थाओं में अंग्रेज़ी भाषा, अंग्रेज़ी संस्कृति और अंग्रेज़ी साहित्य को विशेषत: महत्व दिया जाता था। भारतीय संस्कृति और सभ्यता की उपेक्षा की जाती थी। मालवीय जी ने भारतीय संस्कृति की रक्षा करने का कठिन व्रत लिया। इसके परिणामस्वरूप उन्होंने काशी में सन् 1916 में हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना की। हिंदू विश्वविद्यालय भारत की सबसे बड़ी संस्था है। इसमें कला, विज्ञान, डाक्टरी, इंजिनियरिंग आदि सभी विषयों की पढ़ाई होती है। सारे भारतवर्ष के और विदेशों के भी छात्र यहाँ आकर शिक्षा प्राप्त करते हैं।

मालवीयजी सन् 1886 में कांग्रेस के साधारण सदस्य बने। सन् 1908 में वे लाहौर में कांग्रेस अधिवेशन के सभापति बने। सन् 1931 में महात्मा गाँधीजी के साथ गोल मेज कॉनफ्रेन्स (Round Table Conference) में भाग लेने इंग्लैंड गये।

वे धार्मिक बातों में पुराने विचारों के समर्थक होने पर भी हरिजनों के प्रति बहुत उदार थे। मालवीयजी अजात शत्रु थे। उनके विरोधी भी उनकी निंदा नहीं करते थे। सदा प्रिय वचन बोलना, सबसे प्रेम करना और सबके कष्टों को सहानुभूति के साथ समझना उनका स्वभाव था। उनकी क्षमाशीलता असीम थी।

देश के राष्ट्रीय नेताओं में मालवीयजी का स्थान बहुत ऊँचा है। सभी वर्गों और दलों के लोग समान रूप से उनका आदर करते हैं। सन् 1946 में इस महान आत्मा ने अपना शरीर त्याग दिया। उनकी मृत्यु से सारे देश में शोक छा गया।

भारतीयों के मानस में उनकी याद सदा रहेगी।

3. नेताजी सुभाषचंद्र बोस

देश के स्वतंत्रता-संग्राम के महान सेनानियों में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस का नाम महात्मा गाँधी और पंडित जवाहरलाल नेहरू के साथ ही लिया जाता है। इस महान पुरुष का व्यक्तित्व प्रारंभ से ही ओजस्वी और वीरता-पूर्ण रहा। अन्याय और अत्याचार को सहन करना उनके स्वभाव के विरुद्ध था। दासता उनके लिए सबसे बड़ा अभिशाप थी। देश को आज़ाद करने के लिए वे किसी भी कुर्बानी को बड़ा नहीं मानते थे। सन् 1857 के बाद पहली बार भारतीयों की सेना संगठित करके देश से विदेशी सत्ता को समूल उखाड़ फेंकने का प्रयत्न उसी वीर ने किया था। उनका 'जयहिन्द' का नारा देश के कोटि-कोटि कंठों में गूँजने लगा था और फिर स्वतंत्र भारत का तो यह राष्ट्रीय नारा ही बन गया।

सुभाष का जन्म उड़ीसा के कटक नगर में 23 जनवरी 1897 को हुआ था। उनके पिता बाबू जानकीनाथ बोस कटक के एक प्रसिद्ध वकील थे। सुभाष बचपन से ही बड़े मेधावी और स्वाभिमानी थे। एन्ट्रेन्स की परीक्षा उन्होंने प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् वे कलकत्ता के प्रेसिडेंसी कॉलेज़ में पढ़ने लगे। इस कॉलेज में भारतीय विद्यार्थियों को अंग्रेज़ी अध्यापक एवं अंग्रेज़ी विद्यार्थी तिरस्कार की दृष्टि से देखते थे। इसे सहन करना सुभाष के स्वभाव में नहीं था। इस स्थिति का सामना करने के लिए उन्होंने भारतीय विद्यार्थियों का एक दल बनाया। उन्होंने उन अंग्रेज़ी अध्यापकों का डटकर विरोध किया जो भारतीय विद्यार्थियों का तिरस्कार करते थे। कॉलेज के अंग्रेज़ी अध्यापकों ने सम्मिलित रूप से सुभाष पर मनमाने झूठे आरोप लगाये और उन्हें कॉलेज से निष्कासित करा दिया। बाद में उन्हें कलकत्ता विश्वविद्यालय में प्रवेश मिला। सुभाष ने वहाँ से बी.ए. की परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की।

बाबू जानकीनाथ चाहते थे कि उनका पुत्र आई.सी.एस. होकर सरकारी नौकरी में उच्च पद प्राप्त करे। पर सुभाष के मन में देश-प्रेम हिलोरें ले रही थीं। वे ब्रिटिश सरकार की नौकरी करना नहीं चाहते थे। लेकिन पिता के आदेशों के सम्मुख उन्हें झुकना पड़ा। वे परीक्षा देने के लिए इंगलैण्ड गये और केवल आठ महीने के अध्ययन में ही उन्होंने आई.सी.एस. की परीक्षा सम्मानपूर्वक उत्तीर्ण की। पिता की आकांक्षा तो उन्होंने पूरी कर दी, किन्तु अपनी अंतरात्मा की आवाज़ भी वे अनसुनी न कर सके। वे यह सोचते थे कि सिविल सर्विस में रहकर पराधीन देश की जनता की भलाई नहीं की जा सकती। अतः उन्होंने आई.सी.एस. से इस्तीफ़ा दे दिया और भारत लौट आये।

जिस समय सुभाष भारत लौटे, उस समय यहाँ गाँधीजी का सविनय अवज्ञा आंदोलन चल रहा था। बंगाल में देशबंधु चित्तरंजनदास का बड़ा प्रभाव था। सुभाष बाबू ने चित्तरंजनदास को अपना राजनैतिक गुरु बनाया। प्रिंस ऑफ़ वेल्स का भारत आगमन होनेवाला था। अंग्रेज़ी सरकार उनके भव्य स्वागत की तैयारियों में लगी हुई थी। कांग्रेस ने इस स्वागत समारोह का बहिष्कार करने

का निश्चय किया था। बंगाल में देशबंधु तथा सुभाष बाबू के प्रयासों से यह बहिष्कार बहुत सफल रहा। सुभाष की अद्‌भुत संगठन-शक्ति देखकर अंग्रेज़ी सरकार हिल उठी। उसने उन्हें गिरफ़्तार करके जेल में डाल दिया।

छः महीने के बाद जब सुभाष बाबू जेल से छूटे, उन्होंने देशबंधु के साथ मिलकर अपनी राजनीतिक गतिविधियाँ और तेज़ कर दीं। असहयोग आंदोलन बंद हो गया था और सभी नेता जेल से छूट गये थे। कांग्रेस में कुछ लोग चाहते थे कि केवल रचनात्मक कार्य किये जाएँ, परन्तु कुछ लोगों का विचार था कि रचनात्मक कार्यों के साथ ही विधान सभाओं में घुसकर उन्हें खत्म करने या सुधारने का प्रयास किया जाए। देशबंधु और मोतीलाल नेहरू भी इसी मत के थे। इस मत के अनुयायियों ने 'स्वराज्य दल' का गठन किया। सुभाष तो देशबंधु के कट्टर अनुयायी थे ही। उनके अथक परिश्रम और उनकी लगन से स्वराज्य दल की शक्ति बहुत बढ़ गयी। सन् 1918 में जब कलकत्ता नगर निगम के निर्वाचन में स्वराज्य पार्टी को सफलता मिली, तब सुभाष निगम के कार्यपालक अधिकारी हुए। उन्होंने पाँच महीने के अल्प काल में ही नगर निगम की कायापलट कर दी और अनेक महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक कल्याण के कार्य किये।

इसी समय देशबंधु की प्रेरणा से 'वांगलार कथा' नामक पत्र निकाला गया। इसके संपादन का भार सुभाष पर पड़ा। देशबंधु ने दूसरा पत्र 'फ़ारवर्ड' भी निकाला और सुभाष को उसका प्रबंधक बनाया गया। सुभाष को इन दोनों पत्रों के लिए अथक परिश्रम करना पड़ा। उनकी ओजस्वी लेखन-शक्ति, कार्यकुशलता और राष्ट्र-भक्ति की प्रशंसा की।

देश में जहाँ एक ओर गाँधीजी का अहिंसात्मक आंदोलन चल रहा था, वहीं दूसरी ओर क्रांतिकारियों का सशस्त्र आंदोलन भी चल रहा था। बंगाल और उत्तर भारत में इस आंदोलन का विस्तार होने लगा था। सुभाष बाबू ने किसी-न-किसी रूप में इस दल से बराबर संबंध बनाये रखा। सरकार ने इस आंदोलन को दबाने के लिए एक अध्यादेश जारी किया और सुभाष को भी गिरफ़्तार कर लिया गया। किन्तु जेल में उनका स्वास्थ्य खराब होने लगा, इसलिए बाद में उन्हें मुक्त कर दिया गया। इसके बाद तो वे बराबर गिरफ़्तार होते और छूटते रहे।

सुभाष बाबू की गणना अब कांग्रेस के शीर्षस्थ नेताओं में होने लगी थी। वे 1938 में कांग्रेस के अध्यक्ष निर्वाचित हुए। सन् 1939 में वे पुनः कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये, गाँधीजी से मतभेद होने पर वे कांग्रेस से अलग हो गये और 'फ़ारवर्ड ब्लाक' नामक राजनैतिक दल की स्थापना की। इस संगठन ने संपूर्ण देश में बहुत जल्दी ही लोकप्रियता अर्जित कर ली। इस कारण सरकार ने भारत रक्षा कानून के अंतर्गत् उन्हें फिर गिरफ़्तार कर लिया।

द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारंभ हो गया था। सुभाष बाबू इस अवसर पर जेल में बंद नहीं रहना चाहते थे। वे इस अवसर को ब्रिटिश साम्राज्यशाही के चंगुल से भारत को स्वतंत्र कराने का बहुत उपयुक्त अवसर समझते थे। उन्होंने अपनी मुक्ति के लिए जेल में ही आमरण अनशन आरंभ कर दिया। अंग्रेज़ी सरकार उनके अनशन से इतनी भयभीत हुई कि उन्हें उनके घर में ही नज़रबंद कर दिया।

घर में सुभाष बाबू पर पुलिस की कड़ी निगरानी रहती थी, पर वे गुप्त रूप से भारत से बाहर जाने की योजना बना रहे थे। 1941 ई. की जनवरी में एक दिन वे अंग्रेज़ों की आँखों में धूल झोंककर भारत से निकल गये। सुभाष बाबू चाहते थे कि अंग्रेज़ों के विरुद्ध जहाँ से भी सहायता मिल सके, ली जाए। इसीलिए उन्होंने जर्मनी में हिटलर से भेंट की। वे अभी अपने भावी विचार कर ही रहे थे कि उन्हें सिंगापुर आने का निमंत्रण मिला। युद्ध के खतरों की चिन्ता न करते हुए सुभाष पनडुब्बी में बैठकर सिंगापुर पहुँच गये।

सिंगापुर और उसके आसपास के देशों में बहुत से भारतीय बसे हुए थे। अंग्रेज़ों ने जापानियों से युद्ध करने के लिए सिंगापुर मोर्चे पर भारतीय सेना भेज रखी थी। जापानियों ने विभिन्न मोर्चों पर अंग्रेज़ी सेना के सैनिकों को बंदी बना लिया था। इनमें सैकड़ों भारतीय सैनिक भी थे। सुभाष ने सिंगापुर में पहुँचकर ऐसे सैनिकों को मुक्त कराया और 'आज़ाद हिन्द फ़ौज़' का संगठन किया। प्रवासी भारतीयों ने इस फ़ौज़ के लिए अपार धन दिया। सुभाष बाबू यहीं से 'नेताजी' के नाम से प्रख्यात हुए। उन्होंने अपनी सेना को नारा दिया 'दिल्ली चलो'। सिंगापुर में ही नेताजी ने 'आज़ाद हिन्द सरकार' की भी स्थापना की। यहीं उन्होंने 'जय हिन्द' का नारा दिया जो आगे चलकर हमारा राष्ट्रीय नारा बन गया।

आज़ाद हिन्द फ़ौज़ ने ब्रिटिश सैनिकों के विरुद्ध अनेक मोर्चों पर युद्ध किया। युद्ध में विजय प्राप्त करती हुई यह सेना बर्मा की ओर से कई जगह भारत की सीमाओं के अंदर पहुँच गयी, जहाँ तिरंगा झंडा गाड़कर आज़ादी घोषित कर दी गयी। आज़ादी प्राप्त करने के लिए त्याग और बलिदान आवश्यक है। इसलिए सुभाष ने कहा था, "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा।" आज़ाद हिन्द सेना के सैनिक देश-प्रेम में मतवाले थे। वे अपना सर सदा हथेली पर रखते थे। यही कारण था कि वे जिस मोर्चे पर युद्ध करते वहीं उनकी जीत होती। पर विश्व-युद्ध में सन् 1945 से युद्ध का पासा पलटने लगा और मित्र-राष्ट्रों की विजय होने लगी। अंग्रेज़ भी मित्र-राष्ट्रों में ही थे। अतः जगह-जगह अंग्रेज़ों की विजय से आज़ाद हिन्द फ़ौज़ को भी पीछे हटना पड़ा।

इन परिस्थितियों में भी नेताजी निराश नहीं हुए। उन्होंने कहा, "इसमें संदेह नहीं कि हमारे लोग गिरफ़्तार हो जाएँगे, पर देश में ऐसा उत्साह और मनोबल बढ़ेगा कि आज़ाद हिन्द फ़ौज़ के सैनिक छूट जाएँगे और देश स्वतंत्र हो जाएगा।"

नेताजी की यह भविष्य-वाणी सत्य सिद्ध हुई। 15 अगस्त 1947 को देश स्वतंत्र हुआ, किन्तु यह शुभ-दिन आने के पूर्व ही वह महान 'देश-भक्त' स्वतंत्रता संग्राम का अमर सेनानी इस संसार से विदा ले चुके थे। 18 अगस्त सन् 1945 को एक हवाई-यात्रा में उनका विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया और उसी में इस वीर पुरुष ने सदा के लिए आँखें मूँद लीं।

अभ्यास

'नेताजी सुभाष चंद्र बोस' की जीवनी का सारांश लिखिए।

सुभाष चंद्र बोस देश के महान नेता थे। उनका व्यक्तित्व ओजस्वी और वीरता-पूर्ण रहा। वे अन्याय और अत्याचार को किसी भी स्थिति में नहीं मानते थे। देश की दासता उनके लिए असह्य थी। देश की आज़ादी के लिए उनका त्याग अनुपम और अवर्णनीय है।

सुभाष चंद्र बोस का जन्म कटक नगर में 23 जनवरी 1897 को हुआ। पिता बाबू जानकीनाथ बोस प्रसिद्ध वकील थे। बालक सुभाष मेधावी और स्वाभिमानी थे। पिताजी पुत्र को आई.सी.एस पढ़वाना चाहते थे। लेकिन सुभाष आई.सी.एस पढ़कर परायी सरकार की नौकरी करना नहीं चाहते थे। फिर भी पिताजी के आदेशानुसार वे इंग्लैंड गये और आई.सी.एस. परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। सच्चे देशभक्त सुभाष ने अपनी अंतरात्मा की पुकार सुनकर आई.सी.एस. को इस्तीफ़ा दिया और भारत लौटे।

सुभाषचंद्र बोस भारत में देशबंधु चित्तरंजनदास के साथ मिलकर सरकार के खिलाफ़ आंदोलनों में भाग लेने लगे। इस वजह से उन्हें कई बार जेल की हवा खानी पड़ी। जेल से छूटते ही वे सरकार के खिलाफ़ अपनी गतिविधियों को और तेज़ करने लगे। सुभाष चंद्र बोस कुशल लेखक और पत्रकार भी थे।

देश में ब्रिटिश सरकार के खिलाफ़ क्रांतिकारियों के सशस्त्र आंदोलन भी चल रहे थे। सुभाष बाबू इन आंदोलनों के साथ किसी रूप में संबंध बनाये रखते थे। इस कारण सरकार ने उन्हें कैद किया।

सुभाषजी 1938 और 1939 में कांग्रेस के अध्यक्ष चुने गये। लेकिन गाँधीजी से मतभेद होने के कारण कांग्रेस से वे अलग हुए और 'फ़ारवर्ड ब्लाक' नामक राजनैतिक दल स्थापित किया।

सुभाषचंद्र बोस ने सिंगापुर में 'आज़ाद हिंद फ़ौज़' का संगठन किया। प्रवासी भारतीयों से प्राप्त आर्थिक सहायता से उन्होंने फ़ौज़ को काफ़ी मज़बूत किया। वे यहीं 'नेताजी' के नाम से प्रसिद्ध हुए। नेताजी ने 'आज़ाद हिंद सरकार' की भी स्थापना की। उनका नारा था – 'जय हिंद'। उन्होंने कहा, "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आज़ादी दूँगा।"

18 अगस्त 1945 को एक हवाई दुर्घटना में यह वीर-ज्योति हमेशा के लिए बुझ गयी। इस महान देश-भक्त को, स्वतंत्रता-सेनानी को, सेनापति को, अनुपम त्यागी को देश कभी नहीं भूलेगा।

4. रवीन्द्रनाथ ठाकुर

(1)

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर हमारे देश के बहुत बड़े कवि, लेखक और कलाकार हैं। 20-वीं सदी में उनसे बढ़कर दूसरा कवि इस देश में उत्पन्न नहीं हुआ। उन्होंने सैकड़ों पुस्तकें लिखीं, नाटक, उपन्यास, निबन्ध, कविताएँ, गीत आदि लिखे। उनकी रचनाओं में नवीनता, उपयोगिता, विलक्षणता, शिक्षा, मनोरंजन, भक्ति, प्रेम, रहस्यवाद आदि भाव मिलते हैं-अर्थात् विविध प्रकार के भाव उनकी रचनाओं में मिलते हैं। उनकी रचनाएँ सर्वतोमुखी हैं।

उनका जन्म बंगाल में हुआ था और बंगला उनकी मातृभाषा थी। उन्होंने जो कुछ लिखा अपनी मातृभाषा में ही लिखा। अपनी मातृभाषा में रचना करना वे गौरव का विषय मानते थे। पर आज संसार की सभी भाषाओं में उनके ग्रंथों के अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। सभी देशों के लोग उनकी रचनाओं को पढ़कर आनन्द विभोर हो जाते हैं। उनकी लिखी 'गीतांजली' उनकी सबसे प्रसिद्ध रचना है। यह पुस्तक इतनी लोकप्रिय सिद्ध हुई कि विद्वानों ने उसे संसार की सबसे उत्तम रचना मानकर रवीन्द्रनाथ को 'नोबुल पुरस्कार' से विभूषित किया।

(2)

रविबाबू का जन्म एक बहुत ही संपन्न परिवार में हुआ था। उनके पास एक बहुत बड़ी जायदाद थी। लाखों की संपत्ति थी। बहुत-से नौकर चाकर थे। किसी वस्तु की कमी नहीं थी। लक्ष्मी और सरस्वती का ऐसा संयोग बहुत ही कम देखने को मिलता है।

रविबाबू के पूर्वज पहले गोविन्दपुर नाम के एक गाँव में रहते थे और ठाकुर कहे जाते थे। यह ठाकुर शब्द ही अंग्रेजी का टैगोर बन गया। लोग प्यार से उन्हें रविबाबू कहते थे। पीछे चलकर वे गुरुदेव भी कहे जाने लगे।

रविबाबू के दादा द्वारकानाथ ठाकुर बड़े विद्वान और दानी पुरुष थे। उन्होंने अपने जीवन में करोड़ों रुपये कमाये और उतना ही दान भी किया। किसी का कष्ट देखकर उनका हृदय दया से भर जाता था। उस समय उनके पास जो कुछ होता उस आदमी को उसे दे देते। एक बार की घटना है। एक जज साहब के यहाँ किसी साहूकार का एक लाख रुपया बाकी था। जज साहब विलायत जाना चाहते थे। पर साहूकार ने कहा- 'जब तक आप मेरे रुपये नहीं चुकाएँगे, आप हिन्दुस्तान से बाहर नहीं जा सकते।' उसने अदालत में नालिश करने की भी धमकी दी। पर उस समय जज साहब के पास उतने रुपये नहीं थे। द्वारकानाथ जी को इसकी सूचना मिली। जज साहब उनके मित्र थे। वे अपने मित्र की परेशानी नहीं देख सके। चुपचाप साहूकार के पास जाकर रुपये चुका दिये। पीछे जज साहब को पता चला कि द्वारकानाथ ठाकुर ने रुपये चुकाये हैं तो बड़े आश्चर्य में पड़ गये। इतनी बड़ी

सहायता दूसरा कौन कर सकता था? उन्होंने जाकर द्वारकानाथजी से क्षमा माँगी और विलायत जाने का अपना प्रोग्राम रद्द कर दिया।

रविबाबू के पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर भी बड़े विद्वान और त्यागी पुरुष थे। वे भी अपने पिता से कम दानशील नहीं थे। उन्होंने भी लाखों रुपये दान में दिये थे। देवेन्द्रनाथ ठाकुर एक अच्छे समाज सुधारक भी थे। समाज में जो बुराइयाँ थीं उन्हें दूर करना चाहते थे। उन्होंने लोगों के बीच पवित्र विचार, पवित्र जीवन तथा पवित्र रहन-सहन का प्रचार करने हेतु एक समाज स्थापित किया जिसका नाम 'ब्राह्मो समाज' रखा। वे समाज से नीच-ऊँच का भेद मिटाकर सबके बीच समानता का भाव उत्पन्न करना चाहते थे। उनकी दृष्टि में सब मनुष्य बराबर हैं। ब्राह्मण और भंगी का कोई भेद वे नहीं मानते थे। वे एक महान धार्मिक व्यक्ति थे और अपना बहुत-सा समय भगवान के ध्यान और भगवत भजन में बिताते थे। इसलिए लोग उनको 'महर्षि' कह कर उनका आदर करते थे।

एक बार महर्षि देवेन्द्रनाथ बोलपुर के पास से यात्रा कर रहे थे। मार्ग में उन्हें एक बहुत बड़ा मैदान दिखायी दिया। यह मैदान दूर तक फैला हुआ था और बस्ती से बहुत दूर था। उसके मध्य में आम के दो वृक्ष उगे हुए थे। चारों तरफ़ अपूर्व शान्ति विराज रही थी। उसे देखकर देवेन्द्रनाथजी ने सोचा अहा! यह स्थान कितना शान्त और एकान्त है। यह स्थान भगवान का भजन करने के योग्य है। वे थोड़ी देर आम के पेड़ों के नीचे बैठकर भगवान का ध्यान करते रहे। कुछ दिनों के बाद उन्होंने उस मैदान की भूमि खरीद ली और वहाँ एक छोटा-सा आश्रम स्थापित किया। वे कभी कभी उस आश्रम में रहकर भगवान का भजन करते और एकान्त जीवन का आनन्द लेते। आगे चलकर उनके सुपुत्र श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने उसी मैदान में शान्तिनिकेतन स्थापित किया जो देश की एक आदरणीय संस्था बन गयी।

(3)

रविबाबू इन्हीं महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर के सुपुत्र हैं। उनका जन्म सन् 1861 ई. में कलकत्ता में हुआ था। उनके कई भाई बहिन थे। सब भाई बहिन अपने पिता के समान ही विद्वान और प्रतिभाशाली थे। सारा ठाकुर परिवार कला और साहित्य का प्रेमी था।

रवि बाबू की माता का स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। वे सदा रुग्ण रहा करती थीं। घर में बच्चे भी बहुत थे। पिता देवेन्द्रनाथ ठाकुर का अधिक समय समाज सेवा तथा सरस्वती की उपासना में व्यतीत होता था। इसलिए बच्चों की देख-रेख का भार नौकरों पर था। घर में कई नौकर थे। वे बच्चों पर बड़ी कड़ाई रखते थे। उन्हें कहीं इधर-उधर जाने या घूमने नहीं देते थे। रविबाबू ने अपनी जीवन-स्मृति में लिखा है कि–'मेरी देख-रेख के लिए भी एक नौकर था। वह मुझे कभी घर के बाहर नहीं जाने

देता था। जब कभी वह खुद बाहर जाने लगता तो मेरे कमरे के सामने एक लकीर खींच देता और कहता–'देखो, इस लकीर को पार मत करना। अगर बाहर निकले तो तुम्हारी खैर नहीं।' रवीन्द्रनाथ ने कभी उस लकीर को पार करने का साहस नहीं किया। जब पार करना चाहते तो उन्हें रामायण की वह कथा याद आ जाती। लक्ष्मण ने सीताजी की कुटिया के सामने एक रेखा खींच दी थी और कहा था कि इसे पार मत करना। सीता ने उस रेखा को पार किया और रावण उन्हें उठा ले गया।

रवीन्द्र अपने घर के आंगन में ही खेलते-कूदते। उनके घर के आंगन में दो-तीन पेड़ों का एक छोटा-सा बगीचा था। वे ही पेड़ उनके साथी थे। उन्हीं के आस पास वे खेलते थे। कभी-कभी अपने कमरे की खिड़की से वे बाहर झांकते और बाहर के मनोहर दृश्य को देखकर अपना मन बहलाते, पर उनको बाहर जाने की इज़ाज़त नहीं थी।

रवीन्द्रनाथ की प्रारंभिक शिक्षा कलकत्ते में हुई। वे ओरियंटल सेमेनरी में पढ़ने के लिए भेजे गये। पर स्कूल में पढ़ने में उनका मन नहीं लगता था। केवल पुस्तकीय शिक्षा से उन्हें बड़ी घृणा थी। वे तो प्रकृति के पुजारी थे। इसलिए उन्होंने पाठशाला छोड़ दी। तब उनके पिता ने उनको पढ़ाने के लिए कई शिक्षक नियुक्त कर दिये। रवीन्द्रनाथ के पिता बड़े साहित्य प्रेमी थे, इसलिए उनके घर पर सदा विद्वानों और कवियों का जमघट रहता था। रवीन्द्र उनके वार्तालाप सुनकर भी बहुत-सी बातें सीख लेते थे। बचपन में उन्हें कुश्ती सिखाने के लिए भी एक शिक्षक नियुक्त थे। उन दिनों लोगों में कुश्ती का शौक खूब था।

बालक रवीन्द्र को प्रकृति से बड़ा प्रेम था। वे घंटों अपने कमरे की खिड़की से प्रकृति की शोभा निहारा करते थे। नित्य प्रातःकाल सूरज का उदय होना, संध्या के समय उसका अस्त होना, बादलों का आना, रिमझिम करके पानी का बरसना, आदि देखकर उनका मयूर-हृदय आनन्द से भर जाता था।

(4)

जब रवीन्द्रनाथ सोलह वर्ष के हुए तब अपने बड़े भाई के साथ विलायत चले गये। वहाँ उनका नाम ब्राइटन के एक स्कूल में लिख दिया गया। स्कूल की पढ़ाई समाप्त करने के बाद वे लंदन के यूनियन सिटी कालेज में भर्ती हुए। उनकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण थी और स्मरण शक्ति भी अद्‍भुत थी। वे विलायत के लोगों के खान-पान, रहन-सहन का बड़े गौर से अध्ययन करते और विलायत में रहते समय वहाँ के लोगों के रहन-सहन के संबंध में अपने मित्रों को पत्र लिखा करते। एक पत्र में उन्होंने लिखा था–'यहाँ सर्दी बहुत है। इसलिए यहाँ के लोगों को अधिक कपड़े पहनने पड़ते हैं और बढ़िया भोजन करना पड़ता है। उनको प्राप्त करने के लिए कठिन परिश्रम करना पड़ता है। हमारा भारतवर्ष गर्म देश है। वहाँ थोड़े कपड़े और थोड़े भोजन से ही निर्वाह हो जाता है। हमारे देश की भूमि भी बहुत उपजाऊ है। अतएव हमारे देश की प्रकृति लोगों को अधिक परिश्रम करने से बचाती है।'

विलायत के लोगों में सच्चाई अधिक होती है। वहाँ के लोग प्रायः एक दूसरे को धोखा नहीं देते। इस संबंध में उन्होंने एक घटना का जिक्र किया था। एक दिन उन्हें एक भिखमंगा मिला। वह सड़क के किनारे खड़े होकर भीख माँग रहा था। उसके कपड़े और जूते फटे थे। रवीन्द्रनाथ ने उसकी दशा देखी तो उन्हें दया आ गयी। उन्होंने सोने की एक गिन्नी निकाल कर उसके हाथ में रख दी और आगे बढ़ गये। थोड़ी दूर जाने पर उन्होंने देखा कि वह भिखमंगा दौड़ता हुआ उनके पीछे आ रहा है। पास आने पर उसने कहा–'साहब! आपने मुझे भूल से एक गिन्नी दे दी है। उसे वापस लीजिए।' उसकी सच्चाई देखकर रवीन्द्रनाथ को बहुत आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा–'मैंने भूल से नहीं, जान बूझ कर तुमको एक गिन्नी दी है।'

विलायत में रहते समय रवीन्द्रनाथ अपनी देशी पोशाक धोती-कुरता ही पहनते थे। उनकी पोशाक को देखकर वहाँ के लोगों को बड़ा अचरज होता था। कभी-कभी उनको देखने के लिए लोगों की भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। बच्चे उन्हें देखने के लिए घेरकर खड़े हो जाते।

(5)

विलायत में भी रवीन्द्रनाथ का मन नहीं लगा। कुछ ही वर्ष वहाँ रहकर वे भारत लौट आये। उन्हें बचपन से ही साहित्य में रुचि थी। आठ वर्ष की आयु में ही उन्होंने कविता लिखना आरंभ कर दिया था। विद्यालय में पढ़ते समय भी वे कविता लिखा करते थे। उन्होंने अंग्रेज़ी के कुछ नाटकों का बंगला में अनुवाद भी किया था।

रवीन्द्रनाथ की लिखी हुई 'गीतांजली' (गीतों की अंजली) नाम की पुस्तक उनकी रचनाओं में सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय है। एक बार वे विलायत जा रहे थे। उस समय हवाई जहाज़ नहीं थे, इसलिए लोग समुद्र के मार्ग से विलायत जाते थे। मार्ग में लगभग बीस-पच्चीस दिन लगते थे। रविबाबू ने जहाज़ में ही अपनी पुस्तक गीतांजली का अनुवाद अंग्रेज़ी में कर लिया। विलायत पहुँचकर उन्होंने अपना वह अनुवाद अपने कुछ मित्रों को दिखाया। उनके मित्र उसे पढ़कर आनन्द विभोर हो गये। विलायत के दूसरे कवियों और समालोचकों ने भी वह पुस्तक पढ़ी। सबने मुक्त कंठ से उसकी प्रशंसा की। जब पुस्तक प्रकाशित हुई तब सारे यूरोप में उसकी धूम मच गयी। स्वीडेन की विद्वत्-मंडली ने उस पुस्तक की भूरि-भूरि प्रशंसा की और 'नोबल पुरस्कार' देकर उनको सम्मानित किया। इस पुरस्कार के पाने से उनका यश सारी दुनिया में फैल गया। सभी देशों से उनके पास बधाई पत्र आये। उस समाचार को पढ़कर भारत के लोगों के आनन्द की सीमा नहीं रही। रवीन्द्रनाथ भारत के सर्व-प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें नोबुल पुरस्कार पाने का सौभाग्य मिला था।

प्रारंभ से ही रवीन्द्रनाथ वर्तमान शिक्षा-पद्धति को नहीं चाहते थे। तीस-चालीस बच्चों को एक छोटे-से कमरे में बंद करके पढ़ाना वे बहुत बुरा मानते थे। उनका विचार था कि इससे बुद्धि कुंठित हो जाती है। इस अप्राकृतिक शिक्षा को वे त्रुटिपूर्ण समझते थे। इसलिए उन्होंने सन् 1901 ई. में बोलपुर के निकट 'शान्ति निकेतन' नामक एक संस्था स्थापित की। शान्तिनिकेतन में बड़े-बड़े मकान और कमरे नहीं थे। लड़के लड़कियाँ पेड़ों की छाया में बैठकर खुली हवा में अपने पाठ पढ़ते है। पढ़ने लिखने के अतिरिक्त उन्हें नृत्य, संगीत, चित्रकला आदि की भी शिक्षा दी जाती थी। धीरे-धीरे शान्तिनिकेतन का नाम दूर-दूर तक फैल गया। विदेशों में भी इसकी ख्याति फैली। इसलिए सब देशों के छात्र-छात्राएँ यहाँ अध्ययन करने और कलाएँ सीखने के लिए आने लगे। धीरे-धीरे शान्तिनिकेतन एक बहुत बड़ी संस्था बन गयी। रवीन्द्रबाबू की मृत्यु के बाद तो शान्तिनिकेतन एक विश्वविद्यालय के रूप में परिणत हो गया ।

सन् 1941 में रवीन्द्रनाथ बीमार पड़े। गाँधीजी को जब उनकी बीमारी का समाचार मिला तो वे कलकत्ता आये। तब तक गुरुदेव रवीन्द्रनाथ की आयु पूरी हो चुकी थी। 7 अगस्त 1941 ई. को उनका देहान्त हो गया। उनकी मृत्यु से सारे संसार में शोक छा गया। उस समय उनकी आयु अस्सी वर्ष की थी।

रवीन्द्रनाथ ने साहित्य की अपूर्व सेवा की। उन्होंने संसार को अमूल्य रत्न दिये। संसार उनका चिर ऋणी रहेगा। हमारे राष्ट्रीय गान 'जन गण मन अधिनायक जय हे' के रचयिता भी रवीन्द्रनाथ ही है।

अभ्यास

रवींद्रनाथ ठाकुर की जीवनी का सारांश लिखिए।

रवींद्रनाथ ठाकुर हमारे देश के एक बहुत बड़े कवि, लेखक और कलाकार हैं। उन्होंने नाटक, उपन्यास, निबंध, कविता तथा गीतों पर सैकड़ों पुस्तकें लिखीं। उनकी रचनाओं में नवीनता, उपयोगिता, विलक्षणता, शिक्षा, मनोरंजन, भक्ति, प्रेम तथा रहस्यवाद जैसे विभिन्न प्रकार के भाव मिलते हैं।

रवींद्रनाथ ठाकुर का जन्म बंगाल के एक संपन्न परिवार में हुआ था। उनकी मातृभाषा बंगाली थी। उन्होंने जो कुछ लिखा अपनी मातृभाषा में ही लिखा, पर आज संसार की सभी भाषाओं में उनके ग्रन्थों का अनुवाद प्रकाशित हो चुका है। उनकी लिखी 'गीतांजली' सबसे प्रसिद्ध रचना है। विद्वानों ने 'गीतांजली' को संसार की सबसे उत्तम रचना मानकर रवींद्रनाथ को 'नोबल पुरस्कार' से विभूषित किया है।

रवींद्रनाथ के दादा द्वारकानाथ ठाकुर बड़े विद्वान और दानी पुरुष थे। उनका हृदय किसी का कष्ट देखकर दया से भर जाता था। रवींद्रनाथ के पिता देवेंद्रनाथ ठाकुर भी बड़े विद्वान और त्यागी पुरुष थे। वे भी अपने पिता से कम दानशील नहीं थे। वे एक अच्छे समाज सुधारक भी थे। उन्होंने लोगों के बीच पवित्र विचार, पवित्र जीवन तथा रहन-सहन का प्रचार करने के लिए 'ब्राह्मो समाज' की स्थापना की। रवींद्रनाथ देवेंद्रनाथ ठाकुर के सुपुत्र थे। उनका जन्म सन् 1861 ई. में कलकत्ते में हुआ था। उनके कई भाई-बहन थे। सारा परिवार कला और साहित्य का प्रेमी था।

रवींद्रनाथ की प्रारंभिक शिक्षा कलकत्ते में हुई। स्कूल में पढ़ने में उनका मन नहीं लगता था। वे तो प्रकृति के पूजारी थे। इसलिए उन्होंने स्कूल छोड़ दिया। तब उनके पिता ने उनको पढ़ाने के लिए कई शिक्षक नियुक्त कर दिये। पिता साहित्य के प्रेमी होने के कारण उनसे मिलने उनके घर सदा विद्वानों एवं कवियों का जमघट रहता था। रवींद्रनाथ उनके वार्तालाप सुनकर बहुत-सी बातें सीख लेते थे। स्कूल की शिक्षा समाप्त करने के बाद वे कॉलेज की पढ़ाई के लिए लंदन चले गये। वे विलायत के लोगों के खान-पान, रहन-सहन का बड़े गौर से अध्ययन करते थे।

विलायत में भी रवींद्रनाथ का मन नहीं लगा। कुछ ही वर्ष वहाँ रहकर वे भारत वापस आ गये। उन्हें बचपन से ही साहित्य में रुचि थी। आठ वर्ष की आयु में ही उन्होंने कविता लिखना प्रारंभ कर दिया था। उन्होंने अंग्रेज़ी के कुछ नाटकों का बंगला में अनुवाद भी किया था। रवींद्रनाथ की लिखी 'गीतांजली' (गीतों की अंजली) नाम की पुस्तक उनकी रचनाओं में सबसे प्रसिद्ध और लोकप्रिय है। स्वीडन की विद्वत्-मंडली ने उस पुस्तक की बहुत प्रशंसा की और 'नोबल पुरस्कार' देकर उनको सम्मानित किया। रवींद्रनाथ भारत के सर्व प्रथम व्यक्ति थे जिन्हें नोबल पुरस्कार पाने का सौभाग्य मिला था।

प्रारंभ से ही रवींद्रनाथ वर्तमान शिक्षा पद्धति को नहीं चाहते थे। इसलिए उन्होंने सन् 1901 ई. में बोलपुर के पास 'शांतिनिकेतन' नामक एक संस्था स्थापित की। पढ़ने-लिखने के अलावा वहाँ नृत्य, संगीत, चित्रकला आदि की भी शिक्षा दी जाती थी। धीरे-धीरे इसकी ख्याति विदेशों में भी फैल गई। यहाँ अध्ययन करने और कलाएँ सीखने के लिए विदेशों से भी छात्र-छात्राएँ आने लगे।

7 अगस्त 1941 ई. को गुरूदेव रवींद्रनाथ का देहांत हो गया। उनकी मृत्यु से सारे संसार में शोक छा गया। रवींद्रनाथ की मृत्यु के पश्चात् शांतिनिकेतन एक विश्वविद्यालय के रूप में परिणत हो गया। रवींद्रनाथ ने साहित्य की अपूर्व सेवा की। हमारे राष्ट्रीय गान 'जन, गण, मन अधिनायक जय हे......' के रचयिता भी रवींद्रनाथ ही हैं।

5. पंडित दीनदयाल उपाध्याय

पं. दीनदयाल उपाध्याय का जन्म 25 सितम्बर, 1916 को राजस्थान के धन्किया में एक मध्यम वर्गीय प्रतिष्ठित हिंदू परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय तथा माता का नाम रामप्यारी था। उनके पिता जलेसर में सहायक स्टेशन मास्टर के रूप में कार्यरत थे और माता बहुत ही धार्मिक विचारधारा वाली महिला थीं। दुर्भाग्यवश जब उनकी उम्र मात्र ढाई वर्ष की थी तो उनके पिता का असामयिक निधन हो गया। इसके बाद उनका परिवार उनके नाना के साथ रहने लगा। यहाँ उनका परिवार दुखों से उबरने का प्रयास ही कर रहा था कि तपेदिक रोग के इलाज के दौरान उनकी माँ दो छोटे बच्चों को छोड़कर संसार से चली गयीं। सिर्फ यही नहीं, जब वे मात्र 10 वर्ष के थे तो उनके नाना का भी निधन हो गया।

उनके मामा ने उनका पालन पोषण अपने ही बच्चों की तरह किया। छोटी अवस्था में ही अपना ध्यान रखने के साथ-साथ उन्होंने अपने छोटे भाई के अभिभावक का दायित्व भी निभाया। दीनदयाल ने कम उम्र में ही अनेक उतार-चढ़ाव देखा, परंतु अपने दृढ़ निश्चय से जिंदगी में आगे बढ़े। जन्म से बुद्धिमान और उज्ज्वल प्रतिभा के धनी दीनदयाल को स्कूल और कॉलेज में अध्ययन के दौरान कई स्वर्ण पदक और प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए। 'सीकर' के महाराज ने उनको एक स्वर्ण मुद्रा तथा 250 रुपये दिये, जिससे उन्होंने पुस्तकें खरीदीं। महाराजा ने उनको छात्रवृत्ति के रूप में प्रतिमहीने 10 रुपये भी दिये; इससे वे पिलानी राजस्थान में इन्टरमीडियट पूरा किया आपने सनातन धर्म कालेज, कानपूर में बी.ए. उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात् उन्होंने सिविल सेवा की परीक्षा पास की। लेकिन आम जनता की सेवा की खातिर उन्होंने इसका परित्याग कर दिया। परीक्षा लिखने जाते समय आप पारंपरिक धोती-कुर्ता पहनकर जाते थे, इसलिए लोग उन्हें 'पंडितजी' कहकर पुकारते थे।

पं. दीनदयाल उपाध्याय अपने जीवन के प्रारंभिक वर्षों से ही समाज सेवा के प्रति अत्यधिक समर्पित थे। वर्ष 1937 में अपने कॉलेज के दिनों में वे कानपुर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर.एस.एस.) के साथ जुड़े। वहाँ उन्होंने आर.एस.एस. के संस्थापक डॉ. हेडगेवार से बातचीत की और संगठन के प्रति पूरी तरह से अपने आपको समर्पित कर दिया। वर्ष 1942 में कॉलेज की शिक्षा पूर्ण करने के बाद उन्होंने न तो नौकरी के लिए प्रयास किया और न ही विवाह का, बल्कि वे संघ की शिक्षा का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए आर.एस.एस. के 40 दिवसीय शिविर में भाग लेने नागपुर चले गये।

भारतीय जनसंघ की स्थापना डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी द्वारा वर्ष 1951 में की गयी एवं दीनदयाल उपाध्याय को प्रथम महासचिव नियुक्त किया गया। वे लगातार दिसंबर 1967 तक जनसंघ के महासचिव बने रहे। उनकी कार्यक्षमता, खुफिया गतिविधियों और परिपूर्णता के गुणों से प्रभावित होकर डॉ.श्यामा प्रसाद मुखर्जी गर्व से कहते थे - "यदि मेरे पास दो दीनदयाल हों, तो मैं भारत का राजनीतिक चेहरा बदल सकता हूँ"। परंतु अचानक वर्ष 1953 में डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी के असमय निधन से पूरे संगठन की जिम्मेदारी दीनदयाल उपाध्याय के युवा कंधों पर आ गयी। इस प्रकार उन्होंने लगभग 15 वर्षों तक महासचिव के रूप में जनसंघ की सेवा की। भारतीय जनसंघ के 14वें वार्षिक अधिवेशन में दीनदयाल उपाध्याय को दिसंबर 1967 में कालीकट में जनसंघ का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया।

दीनदयाल उपाध्याय के अंदर की पत्रकारिता तब प्रकट हुई जब उन्होंने लखनऊ से प्रकाशित होनेवाली मासिक पत्रिका "राष्ट्रधर्म' में वर्ष 1940 के दशक में कार्य किया। आर.एस.एस. के कार्यकाल के दौरान उन्होंने एक साप्ताहिक समाचार पत्र 'पांचजन्य' और एक दैनिक समाचार पत्र 'स्वदेश' शुरू किया था। उन्होंने हिंदी में नाटक 'चंद्रगुप्त मौर्य' और शंकराचार्य की जीवनी लिखी। उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. के.बी.हेडगेवार की जीवनी का मराठी से हिंदी में अनुवाद किया। उनकी अन्य प्रसिद्ध साहित्यिक कृतियों में 'सम्राट चंद्रगुप्त', 'जगतगुरू शंकराचार्य', 'अखंड भारत क्यों है', 'राष्ट्र जीवन की समस्याएँ', 'राष्ट्र चिंतन' और 'राष्ट्र जीवन की दिशा' आदि हैं।

दीनदयाल उपाध्याय की अवधारणा थी कि आज़ादी के बाद भारत के विकास का आधार अपनी भारतीय संस्कृति हो न कि अंग्रेज़ों द्वारा छोड़ी गयी पश्चिमी विचारधारा। हालांकि भारत में लोकतंत्र आज़ादी के तुरंत बाद स्थापित कर दिया था, परंतु दीनदयाल उपाध्याय के मन में यह आशंका थी कि लम्बे वर्षों की गुलामी के बाद भारत ऐसा नहीं कर पायेगा। उनका विचार था कि लोकतंत्र भारत का जन्मसिद्ध अधिकार है न कि पश्चिम (अंग्रेज़ों) का एक उपहार। वे इस बात पर भी बल दिया करते थे कि कर्मचारियों और मज़दूरों को भी सरकार की शिकायतों के समाधान पर ध्यान देना चाहिए। उनका विचार था कि प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान करना प्रशासन का कर्तव्य होना चाहिए। उनके अनुसार लोकतंत्र अपनी सीमाओं से परे नहीं जाना चाहिए और जनता की राय उनके विश्वास और धर्म के आलोक में सुनिश्चित करना चाहिए।

दीनदयाल द्वारा स्थापित 'एकात्म मानववाद' की अवधारणा पर आधारित राजनीतिक दर्शन भारतीय जनसंघ (वर्तमान भारतीय जनता पार्टी) की देन है। उनके अनुसार 'एकात्म मानववाद' प्रत्येक मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा का एक एकीकृत कार्यक्रम है। उन्होंने कहा कि एक

स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में भारत पश्चिमी अवधारणाओं जैसे - व्यक्तिवाद, लोकतंत्र, समाजवाद, साम्यवाद और पूंजीवाद पर निर्भर नहीं हो सकता है। उनका विचार था कि भारतीय मेधा पश्चिमी सिद्धांतों और विचारधाराओं से घुटन महसूस कर रही है, परिणामस्वरूप मौलिक भारतीय विचारधारा के विकास और विस्तार में बहुत बाधा आ रही है।

निधन :-

19 दिसंबर 1967 को दीनदयाल उपाध्याय को भारतीय जनसंघ का अध्यक्ष चुना गया, पर नियति को कुछ और ही मंजूर था। 11 फ़रवरी, 1968 की सुबह मुग़ल सराय रेलवे स्टेशन पर दीनदयाल का निष्प्राण शरीर पाया गया। इसे सुनकर पूरा देश दुःख में डूब गया। इस महान नेता को श्रद्धांजलि देने के लिए राजेंद्र प्रसाद मार्ग पर भीड़ उमड़ पड़ी। उन्हें 12 फ़रवरी, 1968 को भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसैन, प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी और उप प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई द्वारा श्रद्धांजलि अर्पित की गई।

सन् 2016 के बाद अनेक संस्थानों को पंडित दीनदयाल उपाध्याय का नाम दिया गया। दिल्ली में उनके नाम पर एक बड़ा मार्ग है। 2018 में सूरत में निर्मित एक पुल का नाम 'पंडित दीनदयाल उपाध्याय पुल है। 16.02.2020 में वाराणसी में आपके लिए एक स्मारक निर्मित किया गया और उनके 63 फुट की प्रतिमा स्थापित की गई। आपके नाम पर 'पंडित दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना' भी है। यह युवा रोज़गार योजना है। ग्रामीण युवाओं को आर्थिक रूप में स्वतंत्र एवं वैश्विक स्तर पर दक्ष बनाना, इस योजना का उद्देश्य है।

अभ्यास

'पंडित दीनदयाल उपाध्याय' की जीवनी का सारांश लिखिए।

पं.दीनदयाल उपाध्याय का जन्म सितंबर 1916 राजस्थान में एक मध्यम (साधारण) हिन्दू परिवार में हुआ। उनके पिता का नाम श्री भगवती प्रसाद उपाध्याय तथा माता का नाम रामप्यारी था। छोटी उम्र में उनके माँ-बाप का स्वर्गवास हो गया। मामा ने उनका पालन पोषण किया।

दीनदयाल ने अपने बचपन में अनेक उतार-चढ़ाव देखे। उनको अपनी बुद्धिमत्ता और प्रतिभा के कारण स्कूल व कालेज़ में कई स्वर्ण पदक और पुरस्कार प्राप्त हुए। उन्होंने कानपुर विश्वविद्यालय से स्नातक शिक्षा पूरी की।

पं. दीनदयाल 1937 में कानपुर के राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ (आर.एस.एस) के साथ जुड़े। 1942 में कालेज़ की पढ़ाई पूर्ण करने के बाद आर.एस.एस. के प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए नागपुर चले गये। 1951 से 1967 तक वे जनसंघ के सेवक रहे। 1967 में उनको जनसंघ का अध्यक्ष निर्वाचित किया गया।

उन्होंने आर.एस.एस के कार्यकर्त्ता के पद में रहते समय साप्ताहिक पत्र 'पांचजन्य' और दैनिक पत्र 'स्वदेश' शुरु किये। उन्होंने डॉ.के.बी. हेडगेवार की जीवनी का मराठी से हिंदी में अनुवाद किया। उनकी प्रमुख रचनाएँ 'सम्राट चंद्रगुप्त' 'जगतगुरु शंकराचार्य', 'अखंड भारत क्यों हैं'? 'राष्ट्र जीवन की समस्याएँ', 'राष्ट्र चिंतन' और 'राष्ट्र जीवन की दिशा' आदि हैं।

उनका विचार था कि प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान करना प्रशासन का कर्तव्य होना चाहिए। लोकतंत्र भारत का जन्म सिद्ध अधिकार है। दीनदयाल द्वारा स्थापित एकात्म मानववाद प्रत्येक मनुष्य के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा को एकीकृत करनेवाला कार्यक्रम है।

उनका निधन 11फ़रवरी 1968 में हुआ। इसे सुनकर पूरा देश शोक सागर में डूब गया ।

सन् 2016 के बाद अनेक संस्थानों को पंडित दीनदयाल उपाध्याय का नाम दिया गया। दिल्ली में उनके नाम पर एक बड़ा मार्ग है। 2018 में सूरत में निर्मित एक पुल का नाम 'पंडित दीनदयाल उपाध्याय पुल' रखा गया। 16.02.2020 में वाराणसी में आपके लिए एक स्मारक निर्मित किया गया और उनके 63 फुट की प्रतिमा स्थापित की गई। आपके नाम पर 'पंडित दीन दयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना' भी है। यह युवा रोज़गार योजना है। ग्रामीण युवाओं को आर्थिक रूप में स्वतंत्र एवं वैश्विक स्तर पर दक्ष बनाना, इस योजना का उद्देश्य है।

6. लाल बहादुर शास्त्री

"हम रहें या न रहें, लेकिन यह झंडा रहना चाहिए और देश रहना चाहिए। मुझे विश्वास है कि यह झंडा रहेगा। हम और आप रहें या न रहें, लेकिन भारत का सिर ऊँचा होगा।" ये उद्‌गार हैं भारत के भूतपूर्व प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री के जो उन्होंने स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर लाल किले की प्राचीर से व्यक्त किये थे।

लाल बहादुर शास्त्री का जन्म 2 अक्टूबर 1904 ई. को मुगलसराय (वाराणसी) के एक साधारण परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम शारदा प्रसाद तथा माता का नाम रामदुलारी देवी था। अनेक सद्‌गुणों के कारण समाज में उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी।

बालक लाल बहादुर जब केवल डेढ़ वर्ष के थे उनके पिता का देहान्त हो गया। पिता का साया उठते ही परिवार का सारा भार माता पर आ पड़ा, किन्तु उन्होंने अपना धैर्य न छोड़ा। अब वे बेटे तथा दो पुत्रियों के साथ अपने पुश्तैनी मकान रामनगर में आकर रहने लगीं। माँ की सारी आशाओं के केन्द्र ये ही बच्चे थे। अनेक अभावों और कठिनाइयों को झेलते हुए उन्होंने इन बच्चों का पालन-पोषण किया।

अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पूरी कर बालक लाल बहादुर वाराणसी आ गये।

पढ़ने-लिखने में लाल बहादुर की विशेष रुचि थी। वे बड़े ही सीधे-सादे, शान्त और मृदुल स्वभाव के बालक थे। साथियों से सदा हिल-मिलकर रहते थे। छोटी-छोटी बातों पर झगड़ना उनके स्वभाव में नहीं था। स्वयं कष्ट सह लेते, पर किसी को कोई कष्ट न देते। सबसे प्रेमभाव रखते। यही कारण था कि वे सभी शिक्षकों और सहपाठियों के प्रिय बने हुए थे।

लाल बहादुर हरिश्चन्द्र हाईस्कूल, बनारस में पढ़ रहे थे। उस समय लोकमान्य बालगंगाधर तिलक की वाणी 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' – पूरे देश में गूँज रही थी। इससे उन्हें देशभक्ति की प्रेरणा मिली। बनारस में ही उन्हें गाँधी जी को पहली बार देखने का अवसर मिला। उनके भाषण से वे बहुत प्रभावित हुए। वह भाषण उनके लिए देश-प्रेम और देश-सेवा का मंत्र बन गया। अब वे अध्ययन के साथ स्वराज्य आन्दोलन में भी समय-समय पर भाग लेने लगे।

गाँधी जी का असहयोग आन्दोलन आरम्भ हुआ। लोग सरकारी नौकरी, स्कूल, कचहरी आदि छोड़कर आन्दोलन में भाग लेने लगे। गाँवों के किसान और मज़दूर इस आंदोलन में शामिल होने लगे। लाल बहादुर शास्त्री भी पढ़ाई छोड़कर आन्दोलन में कूद पड़े। आज़ादी की इस लड़ाई में उन्हें कई बार जेल की यातनाएँ सहनी पड़ीं। किन्तु वे अपने लक्ष्य से नहीं डिगे।

सन् 1921 में स्वदेशी और राष्ट्रीय शिक्षा के प्रसार के लिए बनारस में काशी विद्यापीठ की स्थापना हो चुकी थी। लाल बहादुर जी काशी विद्यापीठ में शिक्षा ग्रहण करने लगे। सन् 1926 में उन्होंने 'शास्त्री' परीक्षा उत्तीर्ण की। अब वे लाल बहादुर से 'लाल बहादुर शास्त्री' बन गये।

अध्ययन समाप्त कर शास्त्री जी देश-सेवा में सक्रिय हो गये। पहले वे प्रदेश कांग्रेस के मंत्री बने। फिर उत्तर प्रदेश व्यवस्थापिका के सदस्य चुने गये। इस बीच भी उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा। उन्हें जो भी काम दिये गये, वे बड़ी ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा एवं परिश्रम के साथ करते रहे। इन गुणों से प्रभावित हो पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें आनन्द भवन में बुला लिया।

सन् 1942 में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में उन्हें पुनः जेल जाना पड़ा। जेल जाने से शास्त्री जी के परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत कमज़ोर हो गयी, पर इससे वे घबराये नहीं। सदैव अपने कर्तव्य पर दृढ़ रहे।

देश स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्र भारत में अपनी सरकार बनी। प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने उन्हें केन्द्रीय मन्त्रिमंडल में रेलमन्त्री बनाया। इस क्षेत्र में उन्होंने अनेक सुधार किये। उनके समय में एक बार भीषण रेल दुर्घटना तमिलनाडु के अरियलूर के पास हुई। यह दुर्घटना सन् 1956, नवंबर 23 को हुई। चेन्नै 'एग्मोर' स्टेशन से निकलकर तूत्तुक्कुडी जानेवाली 'एक्सप्रेस रेल' में यह दुर्घटना हुई। इसमें 200 से अधिक लोग मर गये। यह दुर्घटना ने पूरे भारत को हिला दिया। इस दुर्घटना से दुखी होकर शास्त्री जी ने मन्त्रिपद से त्यागपत्र दे दिया। बाद में उन्हें उद्योगमंत्री तथा स्वराष्ट्र मंत्री का दायित्व दिया गया। सभी पदों पर उन्होंने बड़ी निष्ठा, तत्परता और ईमानदारी से कार्य किया।

पं. जवाहरलाल नेहरू के निधन के बाद शास्त्री जी सर्वसम्मति से भारत के प्रधानमंत्री बने। शास्त्री जी के सीधे-सादे व्यक्तित्व में अद्भुत दृढता भरी हुई थी। प्रधानमन्त्री बनने के कुछ समय बाद ही भारत पर पाकिस्तान ने आक्रमण कर दिया। देश उन दिनों अनेक समस्याओं से जूझ रहा था। अन्न की इतनी कमी थी कि अमेरिका से गेहूँ मँगाना पड़ता था। ऐसे समय में शास्त्री जी ने 'जय जवान, जय किसान' का नारा देकर देशवासियों के स्वाभिमान को जगाया। उन्होंने कहा – "पेट पर रस्सी बाँधो, साग-सब्जी अधिक खाओ। सप्ताह में एक बार शाम को उपवास रखो। हमें जीना है तो इज़्ज़त से जियेंगे, वरना भूखे मर जायेंगे। बेइज़्ज़ती की रोटी से इज़्ज़त की मौत अच्छी रहेगी।" फिर हरित क्रान्ति प्रारम्भ हुई और भारत आत्म निर्भर बना।

भारत-पाक युद्ध में भारत विजयी हुआ। इस विजय ने भारत का मस्तक ऊँचा कर दिया। युद्ध समाप्त होने के बाद रूस में भारत-पाकिस्तान के बीच ताशकन्द समझौता हुआ।

उसी रात 10 जनवरी, 1966 को हृदय रुक जाने से ताशकन्द में ही उनका निधन हो गया। सारा संसार शोक में डूब गया। भारत ने अपने इस महान लोकप्रिय नेता को सदा-सदा के लिए खो दिया। शांति के इस देवदूत के लिए कवि सोहनलाल द्विवेदी ने लिखा है –

"शांति खोजने गया, शांति की गोद सो गया ।
मरते-मरते विश्व-शांति के बीज बो गया ।"

अभ्यास

'लाल बहादुर शास्त्री' की जीवनी का सारांश लिखिए।

सुरक्षा और कृषि - दोनों देश की दो आँखें हैं। इनके महत्व को ध्यान में रखकर ही 'जय जवान, जय किसान' का नारा लगाया गया। यह नारा देकर देशवासियों को जगानेवाले थे हमारे भूतपूर्व प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री। वे कुशल प्रशासक और सीधे-सादे स्वभाव के थे।

शास्त्री का जन्म 2 अक्तूबर 1904 को वाराणसी में हुआ था। पिता का नाम शारदा प्रसाद था और माता का नाम रामदुलारी देवी। वे साधारण परिवार के थे।

बालक लाल बहादुर पढ़ने-लिखने में विशेष रुचि रखते थे। स्कूल में अन्य बालकों के साथ मिल-जुलकर रहते थे। शिक्षकों का बड़ा आदर करते थे।

लाल बहादुर शास्त्री को बालगंगाधर तिलक की "स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" – वाणी से देश-भक्ति की प्रेरणा मिली। उन्होंने असहयोग आंदोलन में भाग लिया और गिरफ़्तार होकर जेल भी गये। उन्हें जो भी पद या काम दिया गया, उसे वे ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा के साथ संभालते थे।

सन् 1942 में 'भारत छोड़ो' आंदोलन के सिलसिले में जब शास्त्रीजी जेल में रखे गये, तब उनके परिवार की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय थी। फिर भी देश के गौरव के सामने उन्होंने उसकी चिंता नहीं की।

देश जब आज़ाद हुआ, तब शास्त्रीजी रेल मंत्री बने। उन्होंने अपने कार्य-काल में रेल विभाग में अनेक सुधार किये। एक बार 1956 को भयंकर रेल दुर्घटना तमिलनाडु के अरियलूर में हुई, तो उसका दायित्व वहन करते हुए उन्होंने अपने मंत्री-पद से इस्तीफ़ा दे दिया। उसके बाद वे उद्योग मंत्री बनाये गये।

पंडित नेहरू के देहांत के बाद लाल बहादुर शास्त्री सर्वसम्मति से प्रधान मंत्री बने। इनके समय में पाकिस्तान ने दूसरी बार भारत पर हमला किया। युद्ध में भारत की जीत हुई। इस तरह प्रधान मंत्री के रूप में उन्होंने भारत का मस्तक दुनिया के सामने ऊँचा किया। शास्त्री के ज़माने में ही भारत और पाकिस्तान के बीच ताश्कंद समझौता हुआ। उन्होंने जिस दिन समझौते पर हस्ताक्षर किये, उसी रात 10 जनवरी,1966 को हृद्‌गति रुकने से उनका देहांत हुआ।

7. राजगोपालाचारी

राजगोपालाचारी महात्मा गाँधी के अनुयायियों में सबसे श्रेष्ठ थे। उनकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण थी। वे सच्चे समाज सेवक थे। गरीबों के प्रति उनके ह्रदय में बहुत सहानुभूति थी। देश सेवा की भावना उनके ह्रदय में भरी हुई थी। वे त्याग और सादगी के मूर्ति थे। उन्होंने अपना जीवन देश के लिए अर्पण कर दिया था।

न बहुत लम्बे, न नाटे, साधारण कद के आदमी थे। सफेद खादी का कुर्ता और धोती पहने हुए और आँखों पर गहरे नीले रंग का चश्मा लगाये हुए लोग उन्हें दूर ही से पहचान लेते थे। सारे भारत के लोग उनकी इज़्ज़त करते थे। उनकी सच्चाई और ईमानदारी का लोहा मानते थे।

राजाजी का जन्म सन् 1880 में सेलम जिले के एक छोटे-से गाँव में हुआ था। स्कूल और कालेज की शिक्षा समाप्त करने के बाद वे कानून पढ़ने मद्रास चले आये । मद्रास विश्वविद्यालय से वकालत की परीक्षा पास की। वकील बनने के बाद वे अपने जिले की अदालत में वकालत करने लगे। वे तीक्षण बुद्धि के तो थे ही, शीघ्र ही उनकी वकालत चल गयी और अच्छी आमदनी होने लगी। वकालत के साथ-साथ समाज सेवा की भावना भी उनके मन में उसी समय उत्पन्न हो चुकी थी। वे सेलम नगरपालिका के अध्यक्ष चुन लिये गये। इस पद से उन्होंने जनता की बड़ी सेवा की। युवावस्था से ही उनके मन में समाज की पिछड़ी जातियों और हरिजनों के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया था। उस समय समाज में छुआछूत का भाव बहुत प्रबल था। ऊँचे जातिवाले हरिजनों को अपने गाँव या घर के पास भी नहीं आने देते थे। राजाजी इन विश्वासों को नहीं मानते थे।

नगरपालिका के अध्यक्ष पद सम्भालने के बाद उन्होंने पहला काम यह किया कि शहर के जल वितरण कार्य में एक हरिजन को नियुक्त कर दिया। इसपर सेलम में बड़ा विरोध और आंदोलन उठा। लोगों ने कहा, राजाजी सबको जाति-भ्रष्ट कर देना चाहते हैं, पर राजाजी टस से मस नहीं हुए। उन्होंने कहा– 'हम भी मनुष्य हैं और हरिजन भी मनुष्य हैं। मानव समाज में भेद कैसा?' आगे चलकर राजाजी ने अनेक मंदिरों के द्वार हरिजनों के लिए खुलवाये।

कुछ वर्ष सेलम में वकालत करने के बाद राजाजी मद्रास चले आये और मद्रास हाइकोर्ट से वकालत करने लगे। उस समय हमारा देश स्वतंत्र नहीं था। देश पर अंग्रेज़ों का राज्य था। महात्मा गाँधी दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेज़ी हुकूमत के विरुद्ध लड़कर और वहाँ शानदार विजय प्राप्त करके भारत लौटे थे। उन्होंने भारत को स्वतंत्र बनाने का बीड़ा उठाया। वे सारे भारत वर्ष में घूमकर देश के नेताओं से मिले। देश को स्वतंत्र बनाने के लिए संगठित रूप से काम करने की सलाह दी। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में अंग्रेजों के साथ युद्ध में सत्याग्रह रूपी अस्त्र का प्रयोग किया था और सफलता पायी थी। भारतवर्ष में भी उसी अस्त्र का प्रयोग करने का उन्होंने निश्चय किया। वे मद्रास में राजाजी

के घर पहुँचे और उन से सलाह लेकर सत्याग्रह आंदोलन छेड़ने का निश्चय किया। इसके अनुसार वकीलों को वकालत छोड़ देना था, मास्टरों को पढ़ाने का काम छोड़कर आंदोलन में लग जाना था और विद्यार्थियों को सरकारी स्कूलों को छोड़कर राष्ट्रीय स्कूलों में जाकर पढ़ने का आदेश था। राजाजी गाँधीजी के प्रस्तावों से बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने वकालत छोड़ दी। सत्याग्रह आँदोलन में शामिल हो गये।

सन 1920 के बाद से राजाजी का सारा जीवन देश और समाज की सेवा में बीता। उन्होंने गाँधीजी के आंदोलनों में सदा उनका साथ दिया। अनेक बार जेल गये और कई वर्ष कारागार में बिताये। गाँधीजी ने सबसे पहला सत्याग्रह आंदोलन 1920 में शुरू किया था। उन्होंने सबको शांति और अहिंसा बरतने का आदेश दिया था। गाँधीजी ने शराब बन्दी का आन्दोलन शुरू किया। राजाजी तन मन से गाँधीजी के कार्यक्रम को सफल बनाने में लग गये। सेलम जिला एक सूखाग्रस्त ज़िला है, वहाँ वर्षा कम होती है। इसलिए वहाँ के किसान प्रायः निर्धन होते थे। उनकी सहायता के लिए राजाजी ने सेलम जिले के 'तिरुच्चेंगोड़' नामक गाँव में गाँधी आश्रम स्थापित किया। वे अपने कुछ चुने हुए साथियों को लेकर जन सेवा कार्य में लग गये। उन्होंने लोगों को चरखा से सूत कातना, छुआछूत का विचार अपने मन से हटा देना, शराब बंदकर देना और हरिजनों से घृणा करना छोड़ देने का उपदेश दिया। अपने आश्रम में दो हरिजनों को भी साथ रखा। पहले तो इस पर लोग बहुत नाराज हुए पर राजाजी की तपस्या से प्रभावित होकर विरोध करना छोड़ दिया।

सन् 1930 में गाँधीजी ने भारत के विदेशी शासकों के विरुद्ध दूसरा आंदोलन छेड़ा। गाँधीजी हमेशा किसी छोटे मुद्दे को पकड़ कर अपना आंदोलन शुरू करते थे। यह उनकी विशेषता थी। इस बार उन्होंने नमक कानून तोड़ने का निश्चय किया बहुत से लोग आश्चर्य में पड़ गये। वे सोचने लगे, भला नमक कानून तोड़ने से स्वाराज़ कैसे मिलेगा? पर गाँधीजी सत्याग्रह के रहस्य को अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने अपने कुछ साथियों को लेकर 150 मील की यात्रा शुरू की जो 'दंडी यात्रा' के नाम से प्रसिद्ध है। 150 मील पैदल चलकर नमक कानून तोड़ा। उसी की देखादेखी राजाजी ने भी अपने 100 साथियों को लेकर तंजाऊर से 100 मील की यात्रा आरंभ की तंजाऊर के कलक्टर ने आज्ञा निकाली कि राजाजी के दल को कोई आदमी खाना-पीना या रहने के लिए स्थान न दें। पर लोगों में अपूर्व उत्साह था। राजाजी का दल जिस-जिस गाँव में पहुँचा, वहाँ के लोगों ने खुले दिल से राजाजी और उनके साथियों का स्वागत सत्कार किया। उन्हें सब प्रकार का भोजन आदि देकर उनकी सहायता की। अन्त में 100 मील की यात्रा पूरी करके राजाजी वेदारण्यम् पहुँचे। वहाँ प्रकृति स्वयं नमक की ढेर लगा देती है, पर उस पर कब्जा सरकार का होता था। राजाजी और उनके साथियों ने उस ढेर से एक-एक मुट्ठी नमक उठाया। बस क्या था? सरकार की पुलिस आ पहुँची और सबको गिरफ्तार करके जेल में डाल दिया।

जेल में भी राजाजी अपना एक भी मिनट व्यर्थ नहीं जाने देते थे। वे अंग्रेज़ी और तमिल के तो अच्छे विद्वान थे ही संस्कृत भाषा का उनका ज्ञान कम था। जेल में रहते समय उन्होने संस्कृत सीखी और उस भाषा में भी विद्वत्ता प्राप्त कर ली। उन्होंने रामायण, गीता, उपनिषद आदि का गहरा अध्ययन किया। वे जेल में रामायण पर प्रवचन देते जिसको सुनने के लिए जेल के सभी राजनैतिक कैदी एकत्रित होते थे।

राजाजी साहित्य के भी प्रेमी थे। उनकी अंग्रेज़ी भाषा गाँधीजी की अंग्रेज़ी के समान ही सरल पर जोरदार होती थी। जब गाँधीजी जेल में थे तब उनकी साप्ताहिक अंग्रेज़ी पत्रिका 'हरिजन' के संपादन का भार राजाजी के कंधों पर ही पड़ा था। राजाजी ने रामायण और महाभारत की कथाएँ अत्यन्त सरल एवं रोचक शैली में तमिल में लिखी हैं, जिनका अनुवाद प्रायः भारत की सभी भाषाओं में हो चुका है। उन्होंने कई छोटी-छोटी कहानियाँ भी लिखी थीं।

राजाजी हिन्दी के बड़े समर्थक थे और बहुत वर्षों तक वे दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास के उपाध्यक्ष रहे । सन् 1937 में जब वे तमिलनाडु और आंध्र के संयुक्त प्रान्तों (मद्रास प्रेसिडेन्सी)के मुख्यमंत्री बने तब उन्होंने घोषणा की कि वे सभी स्कूलों में हिन्दी की पढ़ाई अनिवार्य बनायेंगे। इससे दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार को बहुत प्रोत्साहन मिला।

जब भारत को आजादी मिली, तब राजाजी भारत के प्रथम भारतीय गवर्नर जेनरल बनाये गये। इस पद पर उन्होंने दो वर्षों तक कार्य किया और बड़ी सफलता से देश पर शासन किया। उनके शासन काल में अनाचार, अत्याचार, घूसखोरी, आदि दुर्गुण समाप्त हो गये थे। वे शासक के पद पर बैठकर भी सादा जीवन बिताते थे। सादे कपड़े पहनते थे । सादा भोजन करते थे और भविष्य में आनेवाले शासकों के लिए उच्च कोटि का आदर्श पेश करते थे।

अपनी वृद्धावस्था में वे देश की हालत देखकर दुखी रहते थे। एक दिन जब इस जीवनी का लेखक उनसे मिलने गया तो उन्होंने कहा था- 'मेरे पास रामायण की एक पुरानी कापी है। उसका कागज़ सड़-सा गया है। जहाँ हाथ लगाओ वहीं से उसका एक टुकड़ा टूट कर गिर जाता है। आज हमारे देश को भी वही दशा है।'

राजाजी का त्याग, उनकी तपस्या, उनका देश प्रेम, समाज सेवा, हरिजन प्रेम अद्वितीय थे। उसे हम भारतवासी सदा याद रखेंगे।

अभ्यास

'राजगोपालाचारी' की जीवनी का सारांश लिखिए।

राजगोपालचारी महात्मा गाँधीजी के अनुयायियों में सबसे श्रेष्ठ थे। देश सेवा की भावना उनके हृदय में भरी हुई थी। वे त्याग और सादगी के मूर्ती थे।

राजाजी का जन्म सन् 1880 में सेलम जिले के एक छोटे से गाँव में हुआ था। स्कूल और कॉलेज शिक्षा के बाद वे कानून पढ़ने मद्रास चले गये। मद्रास विश्वविद्यालय से वकालत की परीक्षा पास की। वकील बनने के बाद वे अपने जिले की अदालत में वकालत करने लगे। वकालत के साथ-साथ समाज सेवा की भावना उनके मन में उसी समय उत्पन्न हो चुकी थी। सेलम नगरपालिका के अध्यक्ष पद से उन्होंने जनता की बड़ी सेवा की। युवावस्था से ही उनके मन में समाज की पिछड़ी जातियों और हरिजनों के प्रति प्रेम उत्पन्न हो गया था। उन्होंने जाति-प्रथा का कड़ा विरोध भी किया।

कुछ वर्ष सेलम में वकालत करने के बाद राजाजी मद्रास चले गये और मद्रास हाईकोर्ट से वकालत करने लगे। राजाजी गाँधीजी द्वारा घोषित आंदोलन प्रस्तावों से प्रभावित होकर अपनी वकालत छोड़कर सत्याग्रह आंदोलन में शामिल हो गये।

सन् 1920 के बाद राजाजी का संपूर्ण जीवन देश और समाज की सेवा में बीता। स्वतंत्रता आंदोलन में अनेक बार जेल गये और कई वर्ष कारागार में बिताये। गाँधीजी के हरिजन उद्धार, चरखा प्रचार और शराब बंदी के आंदोलन में राजाजी तन मन से शामिल होकर, इन कार्यक्रमों को सफल बनाने में लग गये। राजाजी ने सेलम जिले के 'तिरुच्चेंगोड़' नामक गाँव में 'गाँधी आश्रम' की स्थापना की। वे अपने कुछ चुने हुए साथियों को लेकर जन सेवा कार्य में लग गये। उन्होंने चरखे से सूत कातना, छुआ-छूत का विरोध करना, शराब का प्रतिबंध लगाना जैसे विषयों पर लोगों को उपदेश दिया।

राजाजी तमिल और अंग्रेज़ी के अच्छे विद्वान थे। जेल में रहते समय उन्होंने संस्कृत सीखी। उन्होंने रामायण, गीता, उपनिषद आदि का गहरा अध्ययन भी किया था।

राजाजी साहित्य के भी प्रेमी थे। उन्होंने रामायण और महाभारत की कथाएँ अत्यंत सरल एवं रोचक शैली में तमिल में लिखी जिनका अनुवाद प्रायः भारत की सभी भाषाओं में हो चुका है। उन्होंने कई छोटी-छोटी कहानियाँ भी लिखी हैं।

राजाजी हिंदी के बड़े समर्थक थे और कई वर्षों तक वे दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास के उपाध्यक्ष रहे। सन् 1937 में जब वे तमिलनाडु और आंध्र के संयुक्त प्रांतों (मद्रास प्रेसिडेन्सी) के मुख्यमंत्री बने तब उन्होंने घोषणा की कि वे सभी स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई अनिवार्य बनायेंगे। इससे दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार को बहुत प्रोत्साहन मिला।

जब भारत को स्वतंत्रता मिली, तब राजाजी भारत के प्रथम भारतीय गवर्नर जेनरल बनाये गये। इस पद पर उन्होंने दो वर्षों तक सफलता पूर्वक शासन किया। वे शासक के पद पर बैठकर भी सादा जीवन बिताते थे, सादे कपड़े पहनते थे, सादा भोजन करते थे और भविष्य में आनेवाले शासकों के लिए आदर्श बन गये।

राजाजी का त्याग, उनकी तपस्या, उनका देश प्रेम, समाज सेवा, हरिजन प्रेम आदि अद्वितीय थे। उन्हें हम भारतवासी सदा स्मरण करेंगे।

राष्ट्रभाषा पाठ्य पुस्तक

भाग - 6

निबंध

1.	स्त्री शिक्षा	...	209
2.	कृत्रिम उपग्रह	...	209
3.	शिक्षा का माध्यम	...	210
4.	पुस्तकालय	...	211
5.	समय का सदुपयोग	...	212
6.	विद्यार्थी जीवन	...	212
7.	गणतंत्र दिवस	...	213
8.	भ्रमण	...	214

निबंध लेखन

निबंध गद्य लेखन की एक विधा है। निबंध का प्रयोग किसी विषय के तार्किक और बौद्धिक विवेचन करनेवाले लेखों के लिए किया जाता है। निबंध को साहित्य की सृजनात्मक विधा के रूप में मान्यता मिली है।

निबंध की भाषा संयमित और सरल होनी चाहिए। प्रभावशाली शब्दों के साथ वाक्य बनाकर निबंध के विषय पर अपने विचारों को व्यक्त किया जाता है। निबंध लिखना किसी कला से कम नहीं है।

राष्ट्रभाषा पाठ्यक्रम के लिए निम्नलिखित शीर्षकों पर निबंध तैयार किये गये हैं -

1. स्त्री शिक्षा
2. कृत्रिम उपग्रह
3. शिक्षा का माध्यम
4. पुस्तकालय
5. समय का सदुपयोग
6. विद्यार्थी जीवन
7. गणतंत्र दिवस
8. भ्रमण

1. स्त्री-शिक्षा

स्त्री देश की रीढ़ की हड्डी है। स्त्रियों के बिना देश एवं घर की उन्नति असंभव है। जब देश उन्नति की ओर अग्रसर है तब स्त्रियों को भी अपने ज्ञान को अद्यतन करने की आवश्यकता है। स्त्रियों को इसके लिए शिक्षित होना आवश्यक है। स्त्रियों को शिक्षा देना हमारा धर्म है। स्त्री-शिक्षा से उनका दृष्टिकोण ही बदल जाता है। प्रत्येक विषय और स्थिति की हानि और लाभ का विचार करने का सामर्थ्य आ जाता है। शिक्षित स्त्रियाँ अंधविश्वासों का शिकार नहीं बनतीं। पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ देश की उन्नति में सहायता दे सकती हैं। शिक्षित स्त्रियाँ अच्छे ढंग से घर संभालती हैं, घर का सारा काम ठीक ढंग से करती हैं और अपने बाल बच्चों को ढंग से पालती हैं और उनको अच्छे तरीके से शिक्षा देती हैं। बच्चों का नियम पालन का अभ्यास करवा सकती हैं। अच्छे रास्ते पर ला सकती हैं।

स्त्री- शिक्षा का सबसे बड़ा लाभ यह कि वे अपने पैरों पर खड़ी रह सकती हैं। उन्हें किसी का भार बनकर रहने की आवश्यकता नहीं होती है। स्त्री शिक्षा के कुछ दोष भी दिखाए जाते हैं। वर्तमान शिक्षा पद्धति के कारण स्त्रियाँ फैशन का गुलाम बन जाती हैं। वे बारीक एवं कीमती साड़ियाँ पहनना पसंद करती हैं सादगी से नफरत करती हैं। शिक्षित स्त्रियों पर एक और आरोप है कि वे अपने हाथों से काम करना पसंद नहीं करतीं। वे बिल्कुल नौकरों पर निर्भर रहती हैं । उनके व्यवहार में स्वाभाविकता नहीं रहती। वे किताबों के आधार पर सब काम करती हैं। वे नयी दुनिया में रहने लगती हैं। लेकिन ये दोष सब शिक्षित स्त्रियों में नहीं पाये जाते। कभी-कभी अशिक्षित स्त्रियाँ भी फैशन की शिकार हो जाती हैं। ऐसी भी कई पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ हैं जो पुराने रीति-रिवाजों को संभालने के साथ-साथ सादा जीवन और उच्च विचार रखती हैं।

स्त्रियों को शिक्षा देना परम कर्तव्य है। उचित शिक्षा पाने से ही स्त्रियाँ शील और सदाचार संबंधी उच्च आदर्श को पूरा करते हुए देश और जाति के लिए गौरव का विषय बन सकती हैं। स्त्री-शिक्षा अनिवार्य है। यहाँ उल्लेखनीय है कि हवाई जहाज़ चलानेवाली महिलाओं की संख्या भारत में अधिक है। पूरे विश्व की संख्या में भारत की 'महिला पाइलटों' की संख्या पचास प्रतिशत से अधिक है। ये महिला पाइलट अत्यंत सुचारू रूप में हवाई-जहाज़ का परिचालन करती हैं। यह अत्यंत आनंद की बात है। शिक्षित महिलाएँ सभी क्षेत्रों में आगे रहती हैं।

2. कृत्रिम उपग्रह

सूर्य या किसी अन्य तारे के चारों ओर परिक्रमा करनेवाले खगोल पिण्डों को ग्रह कहते हैं। हमारे सौर मंडल में नौ ग्रह हैं–बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, बृहस्वति, यम (प्लूटो), शनि, युरेनस और नेप्ट्यून। चंद्रमा पृथ्वी का एक मात्र प्राकृतिक उपग्रह है।

इन ग्रहों और उपग्रहों के बारे में जानने के लिए मनुष्य ने कृत्रिम उपग्रहों का निर्माण किया। रूस ने 4 अक्टूबर 1957 को पहला कृत्रिम उपग्रह अंतरिक्ष में भेजा था। इसका नाम था 'स्पुतनिक'-1। इसके बाद अमेरिका ने भी 'एक्स्प्लोरर' नाम का कृत्रिम उपग्रह अंतरिक्ष में भेजा। भारत का पहला उपग्रह 3 अप्रैल 1974

ईस्वी में अंतरिक्ष में स्थापित किया गया। इस उपग्रह का नाम 'आर्यभट्ट' रखा गया जो भारत के एक प्रसिद्ध गणितज्ञ थे। इसके बाद भारत का दूसरा उपग्रह 'भास्कर'-1 अंतरिक्ष में छोड़ा गया। भास्कर भी प्राचीन भारत के एक प्रसिद्ध गणितज्ञ थे। आगे भारत ने रोहिणी, एप्पल और भास्कर-2 उपग्रहों को भी अंतरिक्ष में भेजा। इसके बाद भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली के अंदर 'इन्साट-1ए', ' इन्साट-1बी' आदि उपग्रह अंतरिक्ष में छोड़े गए। इन उपग्रहों की सहायता से देश के संचार व्यवस्था को बहुत लाभ हुआ है।

कृत्रिम उपग्रहों को राकेटों की सहायता से अंतरिक्ष में भेजा जाता है। ये निश्चित ऊँचाई तक पहुँच कर पृथ्वी की परिक्रमा करते हैं। उपग्रह से संदेशों को प्राप्त करने के लिए एक रिसीवर होता है और इसकी शक्ति बढ़ाने के लिए 'एंपलीफायर' (प्रवर्धक) होता है। इनकी ऊर्जा के लिए बैटरियाँ लगी होती हैं।

उपग्रहों के माध्यम से टेलीफोन, रेडियो और टेलीविज़न संदेश धरती के एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजे जाते हैं। यह संदेश उपग्रह में लगाये गये एंटेना द्वारा ग्रहण किए जाते हैं और रिसीवर के माध्यम से भेज दिए जाते हैं। उपग्रह 'ट्रांसमीटर' (संकेत प्रसारक) इन संदेशों को पृथ्वी के निश्चित भाग की ओर भेजता है और वहाँ लगा रिसीवर इन्हें प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार टेलीविज़न सिग्नल दूसरे देश या दूसरे स्थान पर प्राप्त कर लिया जाता है। उपग्रह द्वारा संसार के किसी भी एक कोने से दूसरे कोने तक आसानी से संपर्क स्थापित किया जा सकता है।

कृत्रिम उपग्रह आज के युग में किसी भी देश की प्रगति के सूचक हैं। इन उपग्रहों के माध्यम से पृथ्वी के बारे में अनेक जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। जल, खनिज, मौसम आदि की जानकारियों के साथ-साथ दूसरे देशों में रक्षा कार्यों के लिए किये गये प्रयासों का भी पता लगाया जा सकता है।

उपग्रहों की सहायता से घर बैठे-बैठे देश के कहीं से भी टेलीविज़न कार्यक्रम देख सकते हैं और अपने रिश्तेदारों से बात कर सकते हैं। 'ऑनलाइन' पढ़ाई भी कर सकते हैं। सचमुच, कृत्रिम उपग्रह वैज्ञानिक चमत्कार है।

3. शिक्षा का माध्यम

भारतवर्ष शिक्षा-क्षेत्र में अग्रसर है। पुराने समय में गुरुकुल में अपनी मातृभाषा में शिक्षा दी जाती थी। जब अंग्रेज़ भारत पर शासन करते थे उनको दुभाषियों की ज़रूरत थी। देश में कई भाषाएँ प्रचलित थीं और आधुनिक विषयों पर पुस्तकें इन भाषाओं में उपलब्ध नहीं थीं। मेकाले का उद्देश्य था कि शिक्षा की पद्धति अंग्रेज़ी माध्यम बनायी जाने पर अंग्रेज़ी के विद्वान उत्पन्न हो जाएँगे और अंग्रेज़ी में उपलब्ध पुस्तकों का अनुवाद देशी भाषा में हो जाएगा। इस प्रकार भारतीय अंग्रेज़ी सभ्यता के संपर्क में रहेंगे। परिणामस्वरुप स्कूलों में अंग्रेज़ी का प्रचार दिन दुगुना रात चौगुना होने लगा। देशी भाषाओं का प्रयोग कम होता जा रहा था और भारतीय अपना साहित्य भूलने लगे ।

देश के शिक्षा-शास्त्रियों और नेताओं को यह बात दुखने लगी और वे आंदोलन करने लगे। उनकी माँग यह थी कि शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी के बदले देशी भाषा बनायी जाए। विद्यार्थियों को मातृभाषा में विज्ञान, इतिहास गणित, भूगोल आदि विषय सिखाएँ जाएँ तो वे विषय उनके लिए बोझ न बनेंगे। अंग्रेज़ी के माध्यम से शिक्षा देने से विद्यार्थियों की बुद्धि कुण्ठित हो जाती है। उनका दिमाग थक जाता है। नये विषयों में उनकी रुचि नहीं होती। मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने से कठिन विषयों को भी आसानी से सीख सकते हैं ।

पर कुछ लोग देशी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाने का विरोध करते हैं। उनका कहना है कि देशी भाषाओं में अच्छी पुस्तकें नहीं हैं। लेकिन रूस, चीन, जापान आदि देशों में अपनी भाषा में ही शिक्षा दी जाती है। भारत में भी स्कूल एवं कालेजों में देशी भाषा के माध्यम से शिक्षा दी जा सकती है और जो विषय अंग्रेज़ी के माध्यम से 10 साल में सिखाया जाता है, वह बस 4 साल में देशी भाषाओं द्वारा सिखाया जा सकता है ।

आज़ादी के बाद देश में स्वदेशी और स्व-भाषा की भावना जागृत हो गई है। कुछ स्कूलों एवं कालेजों में मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा देने की कोशिश कर रहे हैं। तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश में स्कूल के संपूर्ण पाठ्यक्रम की परीक्षाएँ प्रांतीय भाषाओं में भी दी जा रही हैं। सभी भाषाएँ सम्माननीय हैं। हमें किसी भाषा से नफरत नहीं है। हम इतना ही चाहते हैं कि हमारी मातृभाषा के माध्यम से हम ज्ञानार्जन करें।

4. पुस्तकालय

पुस्तकों का संग्रह जिस स्थान पर हो, उसे पुस्तकालय कहते हैं। पुस्तकालय दो प्रकार के होते हैं। एक निजी (प्राइवेट) और दूसरा सार्वजनिक। जो ख़ास व्यक्ति के लाभ के लिए होते हैं, वे निजी पुस्तकालय कहलाते हैं। जो पुस्तकालय जन-साधारण के लिए हैं, वे सार्वजनिक पुस्तकालय कहलाते हैं।

कुछ लोग यह सोचते हैं कि हमारी शिक्षा स्कूलों और कालेजों में ही ख़त्म हो जाती है। यह विचार ठीक नहीं है। केवल पाठ्य पुस्तकें पढ़नेवाले विद्यार्थियों का ज्ञान सीमित रहता है। इसके विपरीत पुस्तकालयों से अच्छी-अच्छी पुस्तकें लेकर पढ़नेवालों का ज्ञान विशाल रहता है। पाठ्यक्रम की बहुत-सी ऐसी पुस्तकें होती हैं, जिनकी व्याख्या के लिए दूसरी पुस्तकों से सहायता लेनी पड़ती है। ऐसी हालत में पुस्तकालयों से उन पुस्तकों को लेकर लाभ उठाया जा सकता है।

वास्तव में पुस्तकालय मानव के लिए बहुत बड़ी देन है। पुस्तकालय से छोटे-बड़े, शिक्षक-शिक्षार्थी, अमीर-गरीब, स्त्री-पुरुष सब लोग फ़ायदा उठा सकते हैं।

हमारे देश में आजकल सभी शहरों में अच्छे पुस्तकालय हैं। पुस्तकालयों में पूर्ण शांति का राज्य रहता है। इस कारण वहाँ किसीके अध्ययन में विघ्न नहीं पड़ता। पुस्तकालय का सदस्य बनकर वहाँ से पुस्तकें अपने घर पर भी ले जा सकते हैं। फिर उसे वापस कर दूसरी किताब घर लाकर पढ़ सकते हैं।

पुस्तकालय वास्तव में बड़ी उपयोगी संस्था है। इससे प्रत्येक मनुष्य को लाभ उठाना चाहिए। यह बड़े हर्ष की बात है कि आज भारतवर्ष में पुस्तकालय लोकप्रिय बनते जा रहे हैं। यह देश की उन्नति का शुभ लक्षण है।

अब सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते-बढ़ते ई-पुस्तकें, ई-पत्रिकाएँ आदि प्रचलित होने लगी हैं। लेकिन हाथ में पुस्तक रखकर आराम से बैठकर पढ़ने में जो आनंद मिलता है, वह ई-पुस्तक के माध्यम से मिलेगा क्या? यह विचारणीय विषय है।

5. समय का सदुपयोग

समय का सही प्रयोग करना ही, समय का सदुपयोग है। जीवन हमें एक बार ही मिलता है। खाये समय को फिर से लौटाना ईश्वर के लिए भी असंभव है। यश, धन, दाम और प्रतिष्ठा आदि तो मूल्यवान हैं- लेकिन इन सबको कमाने के बहाने, हमारे मन को संतोष देनेवाले कार्यों के लिए हम समय दे नहीं पाते हैं; यह गलत है। कुछ लोगों को गाने में अधिक रुचि है तो कुछ लोगों को नाचने में। इस प्रकार हर एक व्यक्ति को एक-एक विषय में रुचि रहती है तो इन विषयों के लिए भी समय देना है।

स्कूल के पुस्तकों के अलावा अच्छी-अच्छी पुस्तकें, अच्छी पत्रिकाएँ आदि पढ़ने के लिए भी समय आबंटित करना है। कार्यालय जानेवाले लोगों को, कुछ समय अपने परिवार के साथ, बच्चों एवं मित्रों के साथ भी बिताना चाहिए।

कुछ लोग आराम करने के समय में भी काम करते हैं। ऐसा भी नहीं करना है। समय पर आराम करना समय पर खेलना, समय पर पढ़ना, समय पर सोना-ये सब मिलकर ही समय का सदुपयोग होता है।

लोग सोना, चाँदी, कीमती कपड़े आदि का प्रयोग अत्यंत सावधानी से करते हैं। लेकिन समय इन सबसे ज्यादा मूल्यवान है-समय का मूल्य लगाना किसी के बस की बात नहीं है। जितने भी लोग ऊँचे पद, ऊँचे स्थान पर हैं, वे सब समय का सही उपयोग एवं परिश्रम के कारण ही वहाँ तक पहुँचे हैं।

6. विद्यार्थी जीवन

विद्या का अर्थ है किसी वस्तु के गुणों को अच्छी तरह जानना। जो लड़का विद्या प्राप्त करता है वह विद्यार्थी कहलाता है। विद्यार्थी वही है जो किसी चरित्रवान व्यक्ति से अच्छी बातों को सीखता है, सेवा का भाव हृदय में रखता है और उत्तम स्वभाववाला होता है। जो अहंकार में फूला रहता है, वह किसी से कुछ नहीं सीख सकता।

विद्यार्थी को दूसरों से उत्तम गुणों को ग्रहण करके, अवगुणों को छोड़ देना चाहिए। अपने मन को संयमित और नियंत्रित रखना चाहिए। दिल और दिमाग को नयी चीज़ों की विशेषताओं को जानने के लिए हमेशा खुला रखना चाहिए। उसे मेहनत-मशक्कत (प्रयास) से घबराना नहीं चाहिए और उसमें पढ़ने-सीखने के कार्य के

प्रति निष्ठा और बड़ों के प्रति सम्मान की भावना होनी चाहिए। विद्यार्थी में सरलता, सादगी, स्वच्छता, पवित्रता आदि कूट-कूटकर भरी रहनी चाहिए। उसे स्वावलम्बी बनकर केवल मानसिक नहीं, बल्कि शारीरिक श्रम भी करना चाहिए।

विद्यार्थी के हृदय में नये-नये कार्यों को करने की उमंग होनी चाहिए। उसे हर स्थिति से परिचित रहना है और उससे उचित फ़ायदा भी उठाना है।

विद्यार्थी का आदर्श आसमान की तरह ऊंचा होना चाहिए, सिद्धान्त हिमालय पहाड़ की तरह अटल रहना चाहिए। हृदय के भाव समुद्र की तरह अनंत और गंभीर होने चाहिए। बड़ों के प्रति श्रद्धा, भक्ति तथा निष्ठा होनी चाहिए और उसे भेद-भाव को भूलकर अपने कर्तव्य में लगे रहना चाहिए। उसे अपने-पराये के पचड़े में न पड़कर सच्चा, आज्ञाकारी और सदाचारी बनना चाहिए।

7. गणतंत्र दिवस

गणतंत्र दिवस हमारा राष्ट्रीय पर्व है। स्वतंत्रता दिवस की भांति इसके पीछे त्याग, बलिदान एवं राष्ट्रभक्ति की भावना छिपी है। गणतंत्र दिवस पूर्ण स्वाधीनता दिवस है।

गणतंत्र दिवस की कहानी सन् 1929 ईस्वी में लाहौर में संपन्न कांग्रेस के अधिवेशन से शुरू हुई। इस अधिवेशन के अध्यक्ष के रूप में तीन नामों को सुझाया गया। गांधीजी और सरदार वल्लभभाई पटेल ने अध्यक्ष बनना नहीं चाहा। अंत में नेहरू जी को अध्यक्ष बनाने का आग्रह किया गया। नौजवान नेहरू अध्यक्ष चुने गए।

लाहौर अधिवेशन में भारत की पूर्ण स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास हुआ। रात के 12:00 बजे रावी नदी के तट पर बसे कांग्रेस नगर में जवाहरलाल नेहरू ने कांग्रेस के अध्यक्ष की हैसियत से पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने के अपने लक्ष्य की घोषणा की और स्वतंत्रता का झंडा फहराया।

इस प्रस्ताव के कारण देश में नया उत्साह और नई प्रेरणा पैदा हुई। स्वराज्य का मतलब बताते हुए जवाहरलाल नेहरू ने कहा कि स्वराज्य का अर्थ है पूर्ण स्वराज्य। इस तरह 26 जनवरी का दिन हमारे संकल्पों का प्रतीक पर्व बन गया। इसके बाद प्रतिवर्ष 26 जनवरी को हम अपनी प्रतिज्ञा दोहराते रहे। जैसे जैसे अंग्रेज सरकार ने हमें कुचलने का प्रयास किया वैसे वैसे हमारे देशप्रेम की भावना बढ़ती गई। 1942 का 'भारत छोड़ो' आंदोलन हमारी स्वतंत्रता साधना का चरम बिंदु बन गया।

अनेक लोगों के त्याग एवं बलिदान के कारण 15 अगस्त 1947 को देश आजाद हुआ । हमें आज़ादी तो मिली लेकिन भारत गणतंत्र नहीं बना। हमें अपने देश का संविधान बनाना शेष रहा। डॉ. राजेंद्र प्रसाद की

अध्यक्षता में 'संविधान समिति' बनायी गयी। अंत में 26 जनवरी 1950 के दिन भारत को "सर्व प्रभुसत्ता संपन्न लोकतंत्रिक गणराज्य" घोषित किया गया। सारे देश में प्रसन्नता फैल गई। हमें पूरी तरह स्वतंत्रता मिली और अंग्रेज़ों की गुलामी से मुक्ति मिली।

26 जनवरी का राष्ट्रीय उत्सव 15 अगस्त की ही भांति मनाया जाता है। उस दिन सार्वजनिक छुट्टी होती है। सार्वजनिक संस्थाएँ विभिन्न प्रकार के कार्यक्रम प्रस्तुत करती हैं। आकाशवाणी और दूरदर्शन से विशेष कार्यक्रम प्रसारित किये जाते हैं । सरकारी दफ्तरों में तिरंगा-झंडा लहराया जाता है। इंडिया गेट पर राष्ट्रपति द्वारा ध्वज का अभिवादन होता है। तीनों सेनाओं की परेड (जुलूस) होती है। राष्ट्रपति तीन सेनाओं की सलामी स्वीकार करते हैं। सारे जहाँ पर उत्साह ही उत्साह रहता है।

विजयी विश्व तिरंगा प्यारा
झंडा ऊँचा रहे हमारा।

8. भ्रमण

नये देशों और नये लोगों को देखने जाना भ्रमण कहलाता है। भ्रमण के बिना शिक्षा पूरी नहीं होती। संसार विशाल है। संसार में अनगिनत वस्तुएँ हैं। वे वस्तुएँ एक ही जगह नहीं मिलतीं। सबसे ऊँचा हिमालय पर्वत हिन्दुस्तान में है, तो आफ्रिका में घने जंगल हैं।

भ्रमण से संसार के प्राकृतिक सौंदर्य को देख सकते हैं। इसके अलावा, भ्रमण के द्वारा भिन्न-भिन्न राज्यों, देशों तथा जातियों के मनुष्यों से संपर्क होता है, उनसे विचार-विनिमय होता है और उनके गुण-दोष परखने का अवसर मिलता है। इतिहास और समाज-शास्त्र (Sociology) के विद्यार्थियों के लिए ये बातें बड़े लाभदायक होती हैं। भूगोल के विद्यार्थी भी भ्रमण से अपना पुस्तकीय ज्ञान की परख कर सकते हैं। इसी कारण स्कूल व कालेजों के पाठ्यक्रमों के अंतर्गत शैक्षिक यात्रा की व्यवस्था की जाती है।

भ्रमण से हमारा ज्ञान विकसित होता है। दूसरे देशवासियों को देखकर हम उनके अच्छे-अच्छे गुणों को ग्रहण कर सकते हैं। भ्रमण की प्रवृत्ति के कारण ही कोलम्बस अमेरिका की खोज कर पाए। भ्रमणशील लोगों के कारण ही नये-नये देशों का पता हमको मिलता है। भ्रमण न करनेवाले संकुचित वृत्ति के होते हैं। वे कूपमण्डूक के समान व्यवहार करते हैं।

आशा है कि भविष्य में लोग भ्रमण की ओर अधिकाधिक ध्यान देंगे तथा इससे वास्तविक लाभ उठाकर अपना भी कल्याण करेंगे और साथ ही अपने देश का भी।

भाग - 7

रचना

			पृष्ठ
1.	भिन्न-भिन्न अर्थवाले शब्द	....	216
2.	समानार्थी शब्द	....	218
3.	वचन	....	218
4.	लिंग	....	221
5.	वाच्य	....	222
6.	सूचना के अनुसार बदलना	....	223
7.	कहावतें / लोकोक्तियाँ	....	225

1. भिन्न-भिन्न अर्थवाले शब्द

सभी भाषाओं की तरह हिंदी में भी कुछ शब्द ऐसे हैं, जिनका प्रयोग भिन्न-भिन्न अर्थों में किया जाता है। छात्रों को इनका ज्ञान होना अनिवार्य है। इस दृष्टि से ऐसे कुछ शब्दों के प्रयोग नीचे दिये जा रहे हैं।

1.	**पर**	मेज़ **पर** किताब है। राम खूब पढ़ता है, **पर** परीक्षा में कम अंक पाता है।
2.	**सोना**	**सोना** एक चमकीली धातु है। दिन में **सोना** बुरा है।
3.	**तीर**	नदी के **तीर** पर एक सुंदर मंदिर है। अर्जुन **तीर** चलाने में निपुण है।
4.	**कल**	तुम **कल** यहाँ आओ। मेरा दोस्त **कल** यहाँ आया था।
5.	**और**	मेज़ पर किताब **और** कलम हैं। एक **और** कलम दीजिए।
6.	**कोई**	आज **कोई** नहीं आया। हमेशा **कोई** काम करते रहो।
7.	**जल**	यह पीने का **जल** है। वहाँ दीप **जल** रहा है।
8.	**कर**	मैं अपना काम **कर** रहा हूँ। आप अपने **कर**-कमलों से यह भेंट उसको दीजिए।
9.	**आप**	**आप** हिंदी पढ़िए। राम अपना काम **आप** ही कर लेता है।
10.	**घटना**	यह **घटना** कब घटी ? चीज़ों के मूल्य का **घटना** और बढ़ना स्वाभाविक है।
11.	**आम**	**आम** मीठा फल है। **आम** जगहों पर तंबाकू पीना मना है।
12.	**मगर**	**मगर** पानी में रहता है। मैं समय पर गया, **मगर** गाड़ी नहीं मिली।

13. **दो** — गोपाल को फल **दो**।
मेज़ पर **दो** फल हैं।

14. **दिया** — उसने तुमको क्या **दिया**?
पहले घर में **दिया** जलाओ।

15. **की** — राम **की** पत्नी सीता है।
मैंने आज सबेरे ईश्वर से प्रार्थना **की**।

16. **फल** — केला मीठा **फल** है।
परीक्षा-**फल** कब आएगा?

17. **कि** — गाँधीजी ने कहा **कि** चरित्र गया, तो सब कुछ गया।
अब तुम आओगे **कि** नहीं?

18. **मत** — दिन में **मत** सोओ।
इस विषय में तुम्हारा **मत** क्या है?

19. **बस** — **बस**, अब बोलना बंद करो।
गाना मेरे **बस** की बात नहीं है।

20. **अच्छा** — मोहन **अच्छा** लड़का है। (**'अच्छा' का प्रयोग विशेषण (Adjective) के रूप में है।)**
सीता **अच्छा** गाती है। (**'अच्छा' का प्रयोग क्रिया विशेषण (Adverb) के रूप में है।)**

21. **काम** — सदा उपयोगी **काम** करो।
काम भावना से बचकर रहना है।

22. **उत्तर** — प्रश्नों के सही **उत्तर** दो।
भारत के **उत्तर** में हिमालय है।

23. **खून** — घाव से **खून** बह रहा है।
जो **खून** करता है, वह खूनी कहलाता है।

24. **भूल** — सावधान रहो, **भूल** मत करो।
आप यह बात **भूल** जाइए।

25. **मार** — पुलिस चोर को खूब **मार** रही है।
राजेश ने रवि को **मार** डाला।

2. समानार्थी शब्द

हिंदी में एक ही अर्थ के लिए कई शब्द प्रचलित हैं। इनको सीखने से छात्रों के शब्द-ज्ञान की वृद्धि होती है।

धरती – भूमि, वसुधा, पृथ्वी	पुत्र – बेटा	सूर्य – सूरज, आदित्य
समुद्र – सागर	औरत–स्त्री, महिला	आदमी – मनुष्य, मानव
तन – शरीर	पुरुष – मर्द	आग – अग्नि
गुस्सा – क्रोध	हाथ – कर, हस्त, पाणि	घर – गृह
नदी – सरिता	देश – मुल्क	ज़रूर – अवश्य
रात – रात्रि, निशा	धंधा – पेशा, व्यवसाय	दिन – दिवस
पेड़ – वृक्ष	प्रश्न – सवाल	यात्रा – सफ़र
सही – ठीक	जंगल – वन	शहर – नगर
गाँव – ग्राम	आकाश–आसमान, अंबर	नक्षत्र – तारा
अख़बार–समाचार पत्र	किताब – पुस्तक, ग्रंथ	आँख – नेत्र
रोगी – बीमार	अध्यापक – शिक्षक	पाठ – सबक
संसार – दुनिया	सिर – मस्तक, शीष	हवा – वायु, पवन
भाषा – ज़ुबान	राजा – नरेश	वस्त्र – कपड़ा
रोज़ – प्रति दिन	चित्र – तस्वीर	उत्तर – जवाब
पत्र – चिट्ठी, ख़त	रास्ता – मार्ग	जानवर – पशु
विरुद्ध – खिलाफ़	पानी – जल, नीर	छाती – सीना

3. वचन

भाषा के सही प्रयोग के लिए छात्रों को वचन संबंधी ज्ञान होना आवश्यक है। हिंदी में दो वचन हैं– एकवचन और बहुवचन। एकवचन शब्द को बहुवचन बनाने के लिए शब्द के लिंग का ज्ञान होना अति आवश्यक है। एकवचन से बहुवचन बनाने के कुछ नियम नीचे दिये जाते हैं।

1. **आ**कारांत पुल्लिंग शब्दों को **ए**कारांत बनाने से बहुवचन रूप मिलता है।

बच्चा – बच्चे	कमरा – कमरे	धंधा – धंधे
लड़का – लड़के	पत्ता – पत्ते	पेशा – पेशे
घोड़ा – घोड़े	कुत्ता – कुत्ते	रेशा – रेशे
रुपया – रुपये	रस्सा – रस्से	पैसा – पैसे

गधा – गधे	मेला – मेले	गाना – गाने
केला – केले	तोता – तोते	महीना – महीने
घड़ा – घड़े	टोकरा – टोकरे	बेटा – बेटे
बगीचा – बगीचे	पोता – पोते	नाला – नाले
कपड़ा – कपड़े	खिलौना – खिलौने	रास्ता – रास्ते

अपवाद

राजा – राजा	नेता – नेता	काका – काका
मामा – मामा	चाचा – चाचा	

2. आकारांत पुल्लिंग शब्दों को छोड़कर बाकी सभी पुल्लिंग शब्द बहुवचन में नहीं बदलते।

पाठ – पाठ	बाग – बाग	युवक – युवक
चोर – चोर	खेत – खेत	मैदान – मैदान
मंदिर – मंदिर	पेड़ – पेड़	हाथ – हाथ
पैर – पैर	काम – काम	समुद्र – समुद्र
मनुष्य – मनुष्य	घर – घर	सिर – सिर
दिन – दिन	वृक्ष – वृक्ष	पत्र – पत्र
अध्यापक–अध्यापक	शहर – शहर	गाँव – गाँव
पहाड़ – पहाड़	साधन – साधन	देश – देश
किसान – किसान	बाघ – बाघ	मंत्री – मंत्री
रोगी – रोगी	पक्षी – पक्षी	भाई – भाई
विद्‌यार्थी–विद्‌यार्थी	व्यापारी–व्यापारी	धोबी – धोबी
पुजारी – पुजारी	मोती – मोती	आदमी – आदमी
खिलाड़ी–खिलाड़ी	मुनि – मुनि	गुरु – गुरु
पशु – पशु	साधु – साधु	डाकू – डाकू

3. अकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के अंत में ें जोड़ने से बहुवचन रूप मिलता है।

कलम – कलमें	गाय – गायें	चीज़ – चीज़ें
जीभ – जीभें	पुस्तक – पुस्तकें	सड़क – सड़कें
इमारत – इमारतें	सरकार – सरकारें	भैंस – भैंसें
जंज़ीर – जंज़ीरें	खबर – खबरें	किताब – किताबें
चट्‌टान – चट्‌टानें	दीवार – दीवारें	आँख – आँखें

ज़मीन – ज़मीनें	दूकान – दूकानें	बूँद – बूँदें
बात – बातें	जान – जानें	भेड़ – भेड़ें
रात – रातें	ज़रूरत – ज़रूरतें	मेज़ – मेज़ें

4. आकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के अंत में 'एँ' जोड़ने से बहुवचन रूप मिलता है।

माता – माताएँ	भाषा – भाषाएँ	यात्रा – यात्राएँ
माला – मालाएँ	सेवा – सेवाएँ	सभा – सभाएँ
शिक्षा – शिक्षाएँ	आशा – आशाएँ	लीला – लीलाएँ
लता – लताएँ	कला – कलाएँ	सेना – सेनाएँ
वीणा – वीणाएँ	विधा – विधाएँ	यातना – यातनाएँ
भावना – भावनाएँ	दिशा – दिशाएँ	प्रथा – प्रथाएँ
रचना – रचनाएँ	पीडा – पीडाएँ	पताका – पताकाएँ
कथा – कथाएँ	सुविधा – सुविधाएँ	हवा – हवाएँ
समस्या–समस्याएँ	विशेषता–विशेषताएँ	सभ्यता – सभ्यताएँ
पाठशाला–पाठशालाएँ		

5. ईकारांत स्त्रीलिंग शब्दों को इकारांत बनाकर उसके अंत में 'याँ' जोड़ने से बहुवचन रूप मिलता है। इकारांत स्त्रीलिंग शब्दों के साथ 'याँ' मात्र जोड़ने से बहुवचन रूप मिलता है।

लड़की–लड़कियाँ	स्त्री – स्त्रियाँ	बेटी – बेटियाँ
युवती – युवतियाँ	गाड़ी – गाड़ियाँ	रानी – रानियाँ
छुट्टी – छुट्टियाँ	पुत्री – पुत्रियाँ	चिट्ठी – चिट्ठियाँ
साड़ी – साड़ियाँ	घड़ी – घड़ियाँ	मिट्टी – मिट्टियाँ
नौकरी–नौकरियाँ	उँगली–उँगलियाँ	बीमारी – बीमारियाँ
सब्जी – सब्जियाँ	रोटी – रोटियाँ	नदी – नदियाँ
कहानी–कहानियाँ	बुराई – बुराइयाँ	तरकारी – तरकारियाँ
उन्नति – उन्नतियाँ	संस्कृति–संस्कृतियाँ	जाति – जातियाँ
दृष्टि – दृष्टियाँ	नीति – नीतियाँ	विधि – विधियाँ

6. उकारांत और ऊकारांत स्त्रीलिंग शब्द निम्न प्रकार बहुवचन में बदलते हैं।

वस्तु – वस्तुएँ	वायु – वायुएँ	बहू – बहुएँ
बाहु – बाहुएँ	वधू – वधुएँ	

4. लिंग

संसार की सभी भाषाओं में 'लिंग' सूचित करनेवाले शब्द हैं। स्त्रीलिंग और पुल्लिंग के शब्द सभी भाषाओं में हैं और आवश्यकतानुसार नपुंसक लिंग का प्रयोग भी है। हिंदी में स्त्रीलिंग और पुल्लिंग - केवल दो लिंग ही हैं। निष्प्राण वस्तुओं के लिए प्रयुक्त शब्द भी इन्हीं दो लिगों में शामिल हैं। वाक्यों में प्रयुक्त शब्दों के प्रयोग पर ध्यान दें; तो लिंग का पता लगाना आसान हो जाएगा।

लिंग परिवर्तन प्राणिवाचक शब्दों में ही है। अतः वर्तमान में प्रचलित कुछ प्राणिवाचक शब्द परीक्षा की दृष्टि से इस पाठ में दिये गये हैं। छात्र इनका अध्ययन करें।

बच्चा — बच्ची	बूढ़ा — बुढ़िया	नर — नारी
लड़का — लड़की	कुत्ता — कुतिया	मर्द — महिला
बेटा — बेटी	चूहा — चुहिया	वर — वधू
पोता — पोती	बंदर — बंदरिया	बिलाव — बिल्ली
चाचा — चाची	वृद्ध — वृद्धा	बादशाह — बेगम
काका — काकी	अध्यक्ष — अध्यक्षा	पति — पत्नी
मामा — मामी	छात्र — छात्रा	हाथी — हथिनी
नाना — नानी	महाशय — महाशया	राजा — रानी
दादा — दादी	महोदय — महोदया	सम्राट — सम्राज्ञी
बकरा — बकरी	सदस्य — सदस्या	स्वामी — स्वामिनी
घोड़ा — घोड़ी	भैंसा — भैंस	ऊँट — ऊँटनी
सखा — सखी	बाप — माँ	शेर — शेरनी
बालक — बालिका	पिता — माता	मोर — मोरनी
युवक — युवती	भाई — बहन	पुत्र — पुत्री
अध्यापक — अध्यापिका	बैल — गाय	कवि — कवयित्री
सेवक — सेविका	देवर — देवरानी	विद्वान — विदुषी
सहायक — सहायिका	ससुर — सास	मालिक — मालकिन
साहब — साहिबा	आदमी — औरत	बाघ — बाघिन

5. वाच्य

विभिन्न वाक्य–रचनाओं में वाच्य का महत्वपूर्ण स्थान है। इसके तीन भेद हैं- 1. कर्तृवाच्य, 2. कर्मवाच्य और 3. भाववाच्य। कर्तृवाच्य को कर्मवाच्य या भाववाच्य में बदलने के लिए कर्तृवाच्य की क्रिया को भूतकाल में बदलकर उसके साथ 'जा' जोड़ा जाता है। 'जा' धातु काल के अनुसार बदलती है।

ध्यान दें:- परीक्षा की दृष्टि से छात्र कर्तृवाच्य से कर्मवाच्य बनाना और कर्मवाच्य से कर्तृवाच्य बनाना आदि दोनों रूपों की अभ्यास करें।

उदा:-	पढ़ता है	–	पढ़ा जाता है।	(वर्तमान काल)
	पढ़ेगा	–	पढ़ा जाएगा।	(भविष्यत् काल)
	पढ़ा	–	पढ़ा गया।	(भूत काल)

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
राम पाठ पढ़ता है।	राम से पाठ पढ़ा जाता है।
राम कहानी पढ़ता है।	राम से कहानी पढ़ी जाती है।
हम हिंदी सीखते हैं।	हमसे हिंदी सीखी जाती है।
पिताजी कविता लिखते हैं।	पिताजी से कविता लिखी जाती है।
माताजी खाना बनाती हैं।	माताजी से खाना बनाया जाता है।
हम गेहूँ ज़्यादा खाते हैं।	हमसे गेहूँ ज़्यादा खाया जाता है।
पिताजी कलम लाये।	पिताजी से कलम लायी गयी।
अध्यापक हिन्दी बोले।	अध्यापक से हिन्दी बोली गयी।
तुलसीदास ने रामायण लिखी।	तुलसीदास से रामायण लिखी गयी।
गाँधीजी ने देश की सेवा की।	गाँधीजी से देश की सेवा की गयी।
राम ने रावण को मारा।	राम से रावण मारा गया।
सरला ने दो फल खाये।	सरला से दो फल खाये गये।
रमेश आज रोटी नहीं खाएगा।	रमेश से आज रोटी खायी नहीं जाएगी।
पुलिस चोर को ज़रूर पकड़ेगी।	पुलिस से चोर ज़रूर पकड़ा जाएगा।
हम गणतंत्र दिवस मनाएँगे।	हमसे गणतंत्र दिवस मनाया जाएगा।
पिताजी कब रुपये भेजेंगे?	पिताजी से कब रुपये भेजे जाएँगे?
मैं पत्र लिखूँगा।	मुझसे पत्र लिखा जाएगा।
नौकर काम कर रहा है।	नौकर से काम किया जा रहा है।
माँ खाना बना रही थी।	माँ से खाना बनाया जा रहा था।

कर्तृवाच्य	भाववाच्य
मैं सबेरे उठ नहीं सकता।	मुझसे सबेरे उठा नहीं जाता।
वह धूप में चल नहीं सकता।	उससे धूप में चला नहीं जाता।
हम तेज़ दौड़ नहीं सकते।	हमसे तेज़ दौड़ा नहीं जाता।
बूढ़ा देर तक बैठ नहीं सका।	बूढ़े से देर तक बैठा नहीं गया।
हम बंद कमरे में सो नहीं सकेंगे।	हमसे बंद कमरे में सोया नहीं जाएगा।

6. सूचना के अनुसार बदलना

भाषा-प्रयोग में अभिव्यक्ति का बड़ा महत्व है। विचारों को प्रकट करने के लिए अलग-अलग अभिव्यक्ति शैली का प्रयोग किया जाता है। इससे भाषा में सुंदरता आती है और भाव भी सही ढंग से प्रकट होता है। राष्ट्रभाषा के छात्र विभिन्न शैलियों से परिचित हों, इस विचार से नीचे कुछ प्रयोग दिये गये हैं।

1. मैं बहुत खुश हूँ। (**'खुश'** के बदले **'खुशी'** का प्रयोग)
   मुझे बहुत खुशी है।
2. यह खबर सुनकर शेखर को दुख हुआ। (**'दुख'** के बदले **'दुखी'** का प्रयोग)
   यह खबर सुनकर शेखर दुखी हुआ।
3. वह बच्चा भूखा है। (**'भूखा'** के बदले **'भूख'** का प्रयोग)
   उस बच्चे को भूख लगी है।
4. मुझे बहुत प्यास लगी है। (**'प्यास'** के बदले **'प्यासा'** का प्रयोग)
   मैं बहुत प्यासा हूँ।
5. राम राज्य में सब लोग सुखी थे। (**'सुखी'** के बदले **'सुख'** का प्रयोग)
   राम राज्य में सब लोगों को सुख होता था।
6. अध्यापक के आते ही छात्र उठ खड़े हुए। (**'ज्योंही–त्योंही'** का प्रयोग)
   ज्योंही अध्यापक आये, त्योंही छात्र उठ खड़े हुए।
7. मैंने उसे पैसा नहीं दिया, क्योंकि मेरे पास पैसा नहीं था। (**'क्योंकि'** के बदले **'इसलिए'** का प्रयोग)
   मेरे पास पैसा नहीं था, इसलिए मैंने उसे पैसा नहीं दिया।
8. तुमने किताब दी। वह बहुत अच्छी थी। (**'जो–वह'** का प्रयोग)
   तुमने जो किताब दी, वह बहुत अच्छी थी।

9. वर्षा के समय किसान खुश होते हैं। (**'जब–तब'** का प्रयोग)
जब वर्षा होती है, तब किसान खुश होते हैं।

10. पुलिस ने उसका नाम पूछा। उसने नहीं बताया। (**'पूछने पर भी'** का प्रयोग)
पुलिस के पूछने पर भी उसने नाम नहीं बताया।

11. मैंने अच्छी तैयारी नहीं की। मुझे पुरस्कार नहीं मिला। ('अगर - तो' का प्रयोग)
अगर मैं अच्छी तैयारी करता, तो मुझे पुरस्कार मिलता।

12. आप खूब कसरत कीजिए। आप मज़बूत बन सकेंगे। (**'ताकि'** का प्रयोग)
आप खूब कसरत कीजिए, ताकि मज़बूत बन सकें।

13. पानी जमा होता है। मच्छर पैदा होते हैं। (**'जहाँ - वहाँ'** का प्रयोग)
जहाँ पानी जमा होता है, वहाँ मच्छर पैदा होते हैं।

14. जयशंकर प्रसाद श्रेष्ठ कवि हैं। वे अच्छे नाटककार भी हैं। (**'ही नहीं, बल्कि'** का प्रयोग)
जयशंकर प्रसाद श्रेष्ठ कवि ही नहीं, बल्कि अच्छे नाटककार भी हैं।

15. हम कल मद्रास जाएँगे। मुंबई नहीं जाएँगे। (**'न कि'** का प्रयोग)
हम कल मद्रास जाएँगे, न कि मुंबई।

16. नमक सत्याग्रह इतिहास की एक घटना है। (**'इतिहास की'** के बदले **'ऐतिहासिक'** का प्रयोग)
नमक सत्याग्रह एक ऐतिहासिक घटना है।

कुछ विशेष प्रयोग

दो या दो से ज़्यादा अलग-अलग वाक्यों को जोड़ने के लिए कुछ विशेष प्रयोग होते हैं। छात्रों के उपयोगार्थ नीचे कुछ नमूने दिये जाते हैं। ऐसे प्रयोगों को सीखने से हम अपनी बात स्पष्ट रूप से प्रकट कर सकते हैं।

1. **अगर–तो**
अगर तुम हिंदी पढ़ते, **तो** तुमको नौकरी मिलती।

2. **जब–तब**
जब सूरज निकलता है, **तब** अंधेरा दूर हो जाता है।

3. **जो–सो**
जो हुआ, **सो** हुआ।

4. **जहाँ–वहाँ**
जहाँ चाह है, **वहाँ** राह है।

5. **ज्योंही – त्योंही**

ज्योंही रवि आया, **त्योंही** कुमार चला गया।

6. **जैसा – वैसा**

जैसा कर्म होता है, **वैसा** फल होता है।

7. **ज्यों ज्यों – त्यों त्यों**

ज्यों ज्यों हम ऊपर जाते हैं, **त्यों-त्यों** हमारी साँस फूलने लगती है।

8. **ही नहीं – बल्कि**

मैं अध्यापक **ही नहीं, बल्कि** विद्‌यार्थी भी हूँ।

9. **जितना – उतना**

जितना खाओगे, **उतना** ही मोटा बनोगे।

10. **इतना – कि**

वह **इतना** कमज़ोर है **कि** चल-फिर नहीं सकता।

11. **जो – वह**

तुम **जो** मिठाई लाये, **वह** बहुत मीठी थी।

12. **न तो – न ही**

न तो वह मेरा मित्र है, **न ही** शत्रु।

13. **जैसा – वैसा**

दक्षिण में **जैसा** चावल मिलता है, **वैसा** चावल उत्तर में नहीं मिलता।

14. **यद्‌यपि – तो भी**

यद्‌यपि वह गरीब है, **तो भी** दानी है।

15. **जैसे ही – वैसे ही**

जैसे ही अध्यापक अंदर आये, **वैसे ही** छात्र उठ खड़े हुए।

7. कहावतें / लोकोक्तियाँ

भाषा में लोकोक्ति का प्रयोग परंपरागत शैली है। किसी विषय को संक्षेप में कहने और समझाने भाषा में लोकोक्तियों का प्रयोग किया जाता है। इससे भाषा में सुंदरता आती है। लोकोक्तियों के कारण श्रोता कथ्य के आशय को स्पष्ट रूप से समझ लेता है।

1. ईद के चाँद होना : (दुष्प्राप्य होना) – राम और रहीम में बड़ी मित्रता थी। वे प्रतिदिन एक दूसरे से मिला करते थे। एक बार कई सप्ताह तक रहीम राम से नहीं मिला, तो राम ने कहा– “आप तो ईद के चाँद हो गये!”

2. आग लगे तब खोदे कुआँ : (विपत्ति के आने पर उसके हल का उपाय सोचना) गोपालदास साल–भर तो खेलता रहा। जब परीक्षा सिर पर आ गयी, तो दिन-रात एक करके पढ़ने बैठा। इसे देखकर उसके भाई ने कहा – "आग लगे तब खोदे कुआँ !"

3. हवन करते हाथ जलना : (भलाई के बदले बुराई होना) सेठजी ने टाइफ़ाइड से पीडित मनुष्य की सेवा की। उसको स्वयं टाइफ़ाइड हो गया, तो लोग कहने लगे, "हवन करते हाथ जल गया।"

4. कभी गाड़ी नाव पर, कभी नाव गाड़ी पर : (परिस्थिति का पलट जाना – समय पर प्रत्येक को एक दूसरे की सहायता करनी पड़ती है।) पं.नारायणजी स्कूटर पर जा रहे थे। रास्ते में उनकी स्कूटर बिगड़ गयी। बेचारे को स्कूटर ढकेलकर लानी पड़ी। उनके एक मित्र ने कहा, "कभी गाड़ी नाव पर, कभी नाव गाड़ी पर !"

5. कुआँ प्यासे के पास नहीं जाता : (जिसको गरज़ होती है, वही दूसरे के पास जाता है।) गोपाल ने अपने दोस्त से कहा, "भाई, तुम्हारी इस पुस्तक को मैं पढ़ना चाहता हूँ। कृपा करके मेरे घर पर दे जाना !" इसे सुनकर दोस्त ने कहा– "अजी ! कुआँ प्यासे के पास नहीं जाता !"

6. लकड़ी के बल बंदरिया नाचै : (दण्ड के भय से आदमी सब कुछ करता है।) रवीन्द्र का कार्य बड़ा असन्तोषजनक था। एक दिन साहब ने उसे बुलाकर नौकरी से निकाल देने की धमकी दी। उस दिन से रवीन्द्र रात–दिन काम में लगा "लकड़ी के बल बंदरिया नाचै !"

7. चिराग तले अंधेरा : (जहाँ संभावना न हो, वहाँ भी अंधकार होना, अर्थात् बड़े आदमियों से भी भूल हो जाना) मोहन ने अपने अध्यापक से कहा-"आप इतने बड़े विद्वान होकर भी ऐसी भूल करते हैं।" अध्यापक ने कहा– "आश्चर्य ही क्या है ? क्या चिराग तले अंधेरा नहीं होता ?"

8. मरी गाय बामन के हाथ : (निकम्मी चीज़ का दान करना) श्रीनिवास ने अपना फटा कपड़ा सेवा समिति को दान में देना चाहा। सेवा समिति के मंत्रीजी ने कपड़े को देखा, तो हँसकर कहा, 'मरी गाय बामन के हाथ !"

9. हीरे की परख जौहरी जाने : (गुणी ही गुण को पहचान सकता है) रामानुजम के गाने सुनकर गवैया शारंगपाणि तो खुश हुआ। पर मूर्ख गोपाल की समझ में कुछ नहीं आया, क्योंकि "हीरे की परख तो जौहरी ही जाने।"

10. हाथी के दाँत खाने के और दिखाने के और : (कहना कुछ, करना कुछ; दूसरे को धोखा देना।)

रहीम ने कहा – तुम्हारे नेता बड़े अजीब आदमी हैं।

गोपाल ने पूछा – क्यों, तुमने क्या बात देखी ?

रहीम – भाई, जब राजनीति के बारे में व्याख्यान देने जाते हैं, तो सिर से पैर तक सफ़ेद ख़ादी पहनते हैं। मैं कल उनके घर पर गया था, तो उनको विलायती कपड़े पहने देखा।

गोपाल – क्या तुम नहीं जानते, हाथी के दाँत खाने के और, दिखाने के और होते हैं।

राष्ट्रभाषा पाठ्य पुस्तक

भाग – 8

अनुवाद अभ्यास

प्रांतीय भाषा में अनुवाद कीजिएः

पाठ – 1

सिद्धार्थ की बातें सुनकर देवदत्त को बड़ा गुस्सा आया। तुरंत राजदरबार में जाकर अपने चाचा शुद्धोदन से बोला–"सिद्धार्थ ने मेरा हंस ले लिया है। मुझे नहीं दे रहा है। कृपा करके मेरा हंस मुझे दिलवा दीजिए।" इतने में ही सिद्धार्थ भी हंस को छाती से चिपकाते हुए वहाँ आ पहुँचा। तब वह बोला– "ठीक है, मुझे न्याय चाहिए। मैंने हंस को बचाया है, इसलिए वह मेरा है। मैं उसे देवदत्त को कभी नहीं दूँगा।"

दोनों की बात सुनकर शुद्धोदन ने कहा–'हाँ, प्राण-घातक की अपेक्षा प्राण-रक्षक का स्थान ऊँचा है। अंत में हिंसा की हार होती है। इसलिए मेरे विचार में इस पक्षी पर सिद्धार्थ का ही अधिकार है। सिद्धार्थ, यह हंस तुम्हारा हुआ।'

पाठ – 2

गाँधीजी ने एक बार कहा था, "धन गया तो कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया, मगर चरित्र गया तो सब कुछ गया।" इसका मतलब है, चरित्र ही मनुष्य की असली संपत्ति है।

वही समाज श्रेष्ठ है और वही राष्ट्र सुखी है जिसकी जनता का चरित्र अच्छा हो। आज के बालक कल के नागरिक हैं। इसलिए उनके चरित्र का निर्माण करना समाज और राष्ट्र का पहला कर्तव्य है। यही कारण है कि स्कूल, कालेज आदि शिक्षा-संस्थाएँ खोली गयी हैं। यहाँ ऐसी शिक्षा दी जाती है, जिससे लड़कों का चरित्र सुधर जाए।

पाठ – 3

एक दिन की बात है। रामदास अपने कमरे में लेटे आराम कर रहा था कि इतने में दो तीन ग्वाले दौड़ते हुए उसके पास आये और कहा– "टीले की बाईं ओर, नाले के पास की झाड़ियों में बाघ छिपा हुआ है। रामदास ने तुरंत बंदूक थाम ली और कारतूस लेकर टीले की ओर चल पड़ा।

रामदास ने देखा कि झाड़ियों में बाघ छिपा हुआ है। तुरंत रामदास ने उसपर गोली चलायी। गोली बाघ के माथे पर जा लगी, वह चित गिर पड़ा और उसी समय वह मर गया।

पाठ – 4

कोडैक्कानल की झील बहुत प्रसिद्ध है। इसके किनारे–किनारे बहुत अच्छी सड़कें बनी हुई हैं। मौसम में इसपर सदा भीड़ रहती है। झील पर नावें भी चलती हैं। नाव चलाने में बड़ा आनन्द आता है। कोडैक्कानल में एक वेधशाला भी है। इसमें सूर्य के संबन्ध में विशेष अनुसंधान करने का प्रबन्ध है।

कोडैक्कानल में देखने लायक स्थान बहुत–से हैं। सड़क से कोडैक्कानल शहर पहुँचने के पहले 'सिलवर कैसकेड' नामक सुन्दर झरना है। यह सचमुच रजत प्रपात ही है। इसके आसपास सदा दर्शकों की भीड़ लगी रहती है।

पाठ – 5

समाचार-पत्र आधुनिक सभ्यता का अविभाज्य अंग है। वही देश सभ्य माना जाता है, जिसमें बड़ी तादाद में समाचार-पत्र निकलते हों। समाचार-पत्र अनेक प्रकार के होते हैं– दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि। यूरोप के कुछ शहरों में, कुछ समाचार-पत्रों का एक ही दिन में दो तीन बार भी प्रकाशन होता है। सबेरे एक बार निकलता है, दोपहर को एक बार, फिर शाम को एक बार।

हमारे देश में सभी भारतीय भाषाओं में अच्छे समाचार-पत्र निकल रहे हैं। हमारा देश प्रजातंत्र देश है। इसलिए यहाँ समाचार-पत्रों का महत्वपूर्ण स्थान है।

पाठ – 6

रबर ख़ास वृक्षों के दूध से बनाया जाता है। उसके वृक्ष भारत, जावा, सुमात्रा, मलाया, अफ्रिका और दक्षिण अमेरिका में पाये जाते हैं। रबर का दूध देनेवाली लताएँ भी होती हैं। इस प्रकार की लताएँ भारत, बर्मा, जावा आदि जगहों में पायी जाती हैं।

रबर के दूध को इकट्ठा करने के बाद उसे गरम पानी में उबाला जाता है। उबलने पर वह नरम हो जाता है। रबर को सीधे आग पर नहीं उबालते, क्योंकि उसमें जल्दी आग लग जाती है। पानी में उबालने के बाद जो चीज़ नीचे बैठ जाती है, उसीमें से रबर निकालते हैं।

आज रबर ने हमारे जीवन में इतना अधिक स्थान जमा लिया है कि यदि वह न हो, तो हमारे अनेक आवश्यक कार्य बंद हो जाएँ।

पाठ – 7

एक रोज़ राजा दशरथ शिकार खेलने गये। वे घोड़ा दौड़ाते हुए एक नदी के किनारे जा पहुँचे। नदी तो वृक्षों की आड़ में थी। वहीं, जंगल में श्रवण नाम का एक अंधा रहता था। उसकी पत्नी भी अंधी थी। उस

वक्त उनका नौजवान बेटा नदी में पानी भरने गया था। पानी में उसके कलसे के डूबने की आवाज़ सुनकर राजा ने समझा कि कोई जंगली हाथी नहा रहा है। फ़ौरन आवाज़ी निशाना बाँधकर तीर चला दिया। तीर नौजवान के सीने में जा लगा। तीर का लगना था कि वह ज़ोर से चिल्लाकर गिर पड़ा।

पाठ – 8

मानव–समाज का कौए से बड़ा घनिष्ठ संपर्क रहा है। कौए के संबंध में हमारे बीच तरह–तरह की कथाएँ प्रचलित हैं। लोक–गीतों में इसका तरह–तरह से उल्लेख है तथा इसके बारे में भाँति–भाँति की धारणाएँ फैली हुई हैं। हम नहीं जानते कि वे सही हैं या गलत। कहते हैं, जब कोई आनेवाला होता है या किसी की ख़बर मिलने को होती है, तो कौआ हमारे घर के दरवाज़े पर आ–आकर बोलता है। इसी तरह विश्वास किया जाता है कि आगे होनेवाली अन्य घटनाओं की सूचना भी वह बोल–बोलकर पहले से ही दे देता है।

इस देश में केवल दो स्थान ऐसे हैं, जहाँ कौए नहीं पाये जाते – दक्षिण भारत में कोडैक्कानल और उत्तर में चित्रकूट। पता नहीं, इसका कारण क्या है।

पाठ – 9

हम जानते हैं कि यह भूमि सूर्य के चारों तरफ़ घूमती है और चाँद भूमि के चारों तरफ़। यह विश्वास किया जाता है कि कभी यह भूमि भी आग का एक गोला थी। अब यह ठंडी होती आ रही है। इसलिए हम इसके ऊपरी भाग में रह सकते हैं, मगर इस भूमि का भीतरी भाग अब भी गरम रहता है।

आकाश में उत्तर दिशा में ध्रुव–नक्षत्र है, जो सदा एक ही स्थान पर रहता है। इससे थोड़ी दूर पर टिमटिमाते सात तारे रहते हैं, जिन्हें, 'सप्त ऋषि' कहते हैं।

पाठ – 10

उन दिनों गाँधीजी के पिता बीमार थे। गाँधीजी उनके सामने जाकर अपनी बात कहने की हिम्मत नहीं कर सके। इसलिए उन्होंने एक पत्र लिखा, जिसमें उन्होंने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया कि उन्होंने माँस खाया है, तंबाकू पी है, चोरी की है; और इसके लिए क्षमा चाहते हैं और प्रण करते हैं कि आगे कभी ऐसा नहीं करेंगे। यह पत्र उन्होंने अपने पिताजी को दे दिया, पिताजी ने यह पत्र पढ़ा तो उनकी आँखों से आँसू निकले। उन्होंने गाँधीजी को माफ़ कर दिया।

पाठ – 11

1. मारनेवाले से जिलानेवाला अच्छा है।
2. यह मानी हुई बात है कि अच्छाई की अपेक्षा बुराई का अनुकरण लोग आसानी से करते हैं।
3. जिसका मन सत्य का मंदिर है, उसका आचरण भी पवित्र होता है।

4. रेगिस्तान की यात्रा के लिए उपयोगी होने के कारण ऊँट को 'रेगिस्तानी जहाज़' कहते हैं।
5. रबर का दूध निकालने के लिए रबर के पेड़ के तने में एक छोटा-सा छेद कर दिया जाता है।
6. पहाड़ बादलों को रोककर पानी बरसाते हैं।
7. पहाड़ी कौओं की रूप-रेखा, कद आदि में मैदानी कौओं से काफ़ी फ़रक दिखाई पड़ती है।
8. दुनिया की चीज़ों के पीछे दौड़ने से मन की शांति चली जाती है।
9. हैदर अली ने अपने सैनिकों को यूरोपीय ढंग से सैनिक शिक्षा देने के लिए फ्रांसीसियों को नियुक्त किया।
10. आरविल राइट और विलवर राइट जिन्होंने हवाई जहाज़ का आविष्कार किया, एक साइकिल की दूकान में नौकर थे।
11. हवाई जहाज़ के आकाश से उतरने और ज़मीन से उड़ने के लिए बड़े खुले मैदान की आवश्यकता है।
12. समुद्र की सतह से करीब 2000 फुट ऊँचा होने के कारण मैसूर की आब-हवा स्वस्थ और आनंदप्रद है।
13. सहकारी समितियों के रहने से आम जनता को नियमित दाम पर सभी वस्तुएँ मिलती हैं।
14. ज्यों-ज्यों पहाड़ पर चढ़ते जाते हैं, त्यों-त्यों हवा में प्राण-वायु की कमी होती रहती है।
15. हर भारतवासी का कर्तव्य है कि वह देश की सेवा कर आज़ादी को बनाये रखे।
16. कोलंबस धैर्यवान और खोज-प्रवृत्ति का युवक था।
17. समुद्र के द्वारा भारतवर्ष और अन्य देशों के बीच दो हज़ार वर्ष पहले से व्यापार चला आ रहा है।
18. नालंदा और तक्षशिला अपने समय के इतने मशहूर शिक्षण केंद्र थे जहाँ विदेशी छात्र भी आकर पढ़ते थे।
19. शिक्षा के विषय में विद्यार्थियों पर किसी भी प्रकार का बोझ या दबाव नहीं होना चाहिए।
20. रवीन्द्रनाथ ठाकुर को श्रेष्ठ साहित्यिक रचना के लिए सन् 1913 को नोबुल पुरस्कार प्रदान किया गया।
21. गरीबी और भूख–दोनों शापों को देश से हटाना चाहिए।
22. भारतीयों का चरम बौद्धिक विकास अंग्रेज़ी के बिना भी संभव है।
23. यह सोचकर आराम करना बड़ी भूल है कि हमने अपना कर्तव्य पूरा कर लिया है।
24. छात्रों को विद्यार्थी–जीवन में पढ़ाई के साथ कोई न कोई धंधा सीख लेना चाहिए।
25. प्रकृति के अनुसार अपने को बदल लेना प्रकृति पर मनुष्य की विजय नहीं है।

हिन्दी में अनुवाद कीजिएः–

पाठ – 1

One day Prince Siddartha was playing in the palace-garden. He saw some wild swans flying in the sky. He loved these fine birds very much. Suddenly one of the swans dropped down from the sky and fell at his feet. There was an arrow in its side. Blood was coming out of its body. The Prince felt very unhappy. He took the arrow out of the bird gently. He put some green leaves on the wounded part. The bird slowly opened its eyes and looked at the prince. Now the prince was very happy.

पाठ – 2

We are all citizens of India. Each of us is a member of one great community, which includes every Indian. The citizen has both rights and duties. Some people think only of their rights. They forget their duties on account of their selfishness. But if we don't perform our duties, how can we claim our rights? Our motherland gives much to us, and expects much from us in return.

पाठ – 3

Whenever a tiger kills an animal, it comes back the next day to eat it. So Ramdas waited for the tiger for three consecutive days. But it did not come to eat the bull. Because he knew that a wounded tiger is usually a dangerous animal. It was likely to attack the nearby villages and destroy them. So it was necessary to kill it. So Ramadoss did not stop to search the tiger.

पाठ – 4

During summer the whole of India is very hot. At that time it is very difficult to do any work. People usually go to the hill stations to escape from the heat. Kodaikanal is a popular summer resort in South India. Many people say that the climate of England and that of Kodaikanal are almost the same. You do not have as much heat at Kodaikanal, as you have at Ooty during the day-time. The temperature at night is also not so cold as at Ooty. The natural scenery of Kodaikanal is just like that of England.

पाठ – 5

The newspaper tells us what is happening all over the world. Within a very few hours of any great event, no matter in which part of the world it occurs, we can read about it in the newspapers. If there is an earthquake in Japan or a railway accident in Australia, we are told about it in the newspapers. The newspapers help to keep the people of different countries in close touch with each other. They play an important part in the world of to-day.

पाठ – 6

For a long time there was not much demand for rubber. But by the beginning of the Twentieth century, the motorcar had begun to take the place of the horse cart. All motorcar tyres have to be made of rubber and of the very best rubber. The first kind of rubber to be grown in the plaintains was called Ceara. Ceara has one advantage, that is, these trees grow quickly, and produce rubber sooner. Ceara does not need so much care, but the life of a Ceara tree is not long. It is much smaller tree that the Para and it does not produce so much of the juice as the Para. Para rubber has now taken the place of Ceara almost everywhere.

पाठ – 7

As king Dasaratha was now getting old, he resolved to retire and confer the sovereignity upon Rama. Great preparation was made for the coronation of Rama. The younger queen, Kaikeyi fell into great dejection. Once upon a time king Dasaratha promised her to grant any two boons she might ask. Hitherto Kaikeyi had made no claim, but now, on hearing that Rama was to be made king, she made two requests – the first, that Bharata should be made king and the second, that Rama should be banished to the forest for fourteen years.

पाठ – 8

Some birds and beasts have keener sight, smell and hearing than human beings, it is possible they can sense somethings that we cannot. In the year 1934, a violent earthquake shook Bihar and caused terrible destruction. It was bright sunny day. Suddenly hundreds and hundreds of crows started yelling in a deep and hoarse tone. When everyone was wondering what had happened to them within ten minutes, the earth shook violenty.

पाठ – 9

Perhaps you know that in fact it is not the sun that has been moving. It is the earth, which turns round on its own axis once a day. As the earth turns round on its own axis the part on which we live is at one time turned towards the sun, and the sun shines upon it. This is the day-time. At another time it is turned away from the sun, and the sun does not shine on it. That is the night.

पाठ – 10

Gandhiji told "Ever since I have grown up, I have never desired to smoke and have always regarded the habit of smoking as barbarous, dirty and harmful. I have never understood why there is such a desire for smoking throughout the world. I cannot bear to travel in a compartment full of people smoking. I feel chocked."

भाग - 8

अनुवाद अभ्यास

(जवाब / Answers / பதில்கள் / జవాబులు / ಉತ್ತರಗಳು / ഉത്തരം)

प्रांतीय भाषा में अनुवाद

पाठ – 1

On hearing the words of Siddhartha, Devadattha became very angry. Soon he went to the king's court and told his uncle Suddhodhana, Siddhartha has taken away my swan and is not returning it to me. Kindly let me get my swan back Meanwhile Siddartha arrived there holding the swan close to his chest. He said "render me justice I have saved swan. So it belongs to me. I never give it back to Devadattha".

On hearing the words of both of them Suddhodhana said, "yes, one who saves life is superior to one who kills. Violence fails in the end. So in my opinion, Siddhartha alone has the right over the bird. Siddartha, the bird belongs to you"

पाठ – 2

Once Gandhiji had told "If wealth is lost nothing is lost; if health is lost, something is lost, but character is lost, everything is lost."

The nation and society in which the people are having good character is always the best and the happiest , Today's Children are tomorrow's citizens. So it is the first and foremost duty of a nation and its society to cultivate characters in them. Educational institutions like schools and colleges have been established only for this reason. Such kind of education is provided here, so that the character of the children be reformed.

पाठ – 3

One day Ramados was taking rest in his room. Just then two or three cowherds came running to him and said that one tiger was hiding among the bushes near the stream on the left side of the hill. Soon after Ramados took the gun with bullets and set out towards the hill.

Ramados saw that tiger was hiding among the bushes. Soon he shot the tiger. The bullet hit the forehead of the tiger. The tiger fell on its back and soon it was dead.

पाठ – 4

The Kodaikkanal lake is very famous. There are many fine roads on its banks. It is always crowded during the season. Even boats ply on the lake. Rowing a boat on the lake gives great pleasure. There is a research centre (observatory) at kodaikkanal. There are facilities to carry on special researches about the sun.

There are many places worth visiting in Kodaikkanal. On the way to Kodaikkanal by road there is a beautiful falls namely silver cascade. Really this falls looks like a silver falls. The place near the falls always overflows with crowds of spectators.

पाठ – 5

The Newspaper is an indivisible part of modern civilization. The country, where there is a large number of news paper is being published considered to be the most civilized. Newspaper are of many kinds. They are dailies, weeklies, fortnighlies, monthlies and so on. In some cities of Europe certain newspaper are published even thrice a day i.e. once in the morning, again at noon and once again in the evening.

In our country good news papers are published in all the Regional languages. Our country is a democratic country. So Newspapers play an important role here.

पाठ – 6

Rubber is prepared from the latex of certain trees. Those trees are found in India. Java, Sumathra, Malaysia, Africa and South America. There are creepers also that give latex. These kinds of creepers are found in India, Burma and Java.

After collecting the latex, it is boiled with water. On boiling it becomes soft. Rubber is not boiled in fire directly. Because it is easily inflammable. After boiling in the water, rubber is prepared from the sediment at the bottom.

Today rubber has occupied an important role in our life. Our many essential works will be stopped if it is not available.

पाठ – 7

One day king Dasaratha went for hunting riding on a horse, He reached the bank of a river. The river is hidden by the trees. A blind man lived in the forest . His wife also was blind. At that time their young son had gone to fetch water from the river. Hearing the sound of the dipping pot, the king thought that a wild elephant was taking bath in the river. At once he shot an arrow in the direction of the sound. The arrow pierced the chest of the young man. No sooner did the arrow hit him than he fell down shouting loudly.

पाठ –8

Human society has a close relationship with crows. Different kinds of stories are prevailing among us about crows. There are so many references in the folk songs about this and many kinds of beliefs exist about this. We don't know that whether they are right or wrong. It is said that crow caws at our door step of the house when somebody is about to come to our house or to receive any body's message. similarly, it is believed that they give us early information of the incidents to be happened in the future give us early.

There are two places in India where crows are not seen. Kodaikkanal in South India and Chitrakkut in North India. The reason for this is not known.

पाठ –9

We know that the earth revolves round the sun and the moon revolves round the earth. It is belived that once upon a time the earth was also a ball of fire. So we can live on its upper side. But the inner part of the earth is hot even now.

The pole star is on the north direction of the sky, which is situated permanently in the same place. A little away from this seven twinkling stars are seen. These are called "Saptha Rishi"

पाठ –10

Gandhi's father was ill in those days. Gandhiji could not have courage to say his word before him . so he wrote a letter in which he clearly accepted the matter that he has eaten meat, smoked cigarettes and stolen and begs his pardon and he assured that he will never do such action in future. He gave this letter to his father. Father read this letter and shed tears. He has pardoned Gandhiji.

पाठ –11

1. One who restores life is superior to one who kills.
2. It is commonly accepted fact that usually people follow bad habits easily than the good habits.
3. Whose mind is a temple of truth his character will be also virtuous.
4. As the camel is useful for travelling in the deserts, it is called 'the ship of the desert'
5. In order to get latex a small hole is drilled into the trunk of the rubber tree.
6. Rain causes after the clouds are being prevented by the mountains.

7. The crows seen in mountain, differ in their shape and size from the crows of the plains.
8. Running after material wealth, spoils peace of mind.
9. Hyder Ali employed Frenchmen to train his army in the European method of warfare.
10. Arville Wright and Wilber Wright, who invented aeroplane, were serving in a cycle shop.
11. Aeroplane requires a large open ground for landing on and taking off.
12. The weather of Mysore is healthy and pleasant, as it is situated 2000 ft above the sea level.
13. People get all things at the moderate rate due to co-operative societies.
14. As climbing up the mountain, oxygen decreases in the air.
15. It is the duty of every Indian to safeguard the independence by serving the nation.
16. Columbus was a courageous and discovering natured youth.
17. Overseas business has been going on between India and other countries since two thousand years.
18. In those days Education centres, Nalanda and Thakshasila were so famous that students from abroad came and studied here.
19. Regarding the education matter students should not have burden or any pressure.
20. Rabindranath Tagore was awarded Nobel Prize for his best literary work in 1913.
21. .The two curses namely poverty and hunger should be removed from the nation.
22. The intellectual development of Indians will be possible without English also.
23. It is a big mistake that to have rest, thinking that we have done our duty.
24. Students should learn a profession along with the school studies in their school days itself.
25. Changing himself according to nature is not meant that man has conquered over nature

19. വിദ്യാഭ്യാസത്തിന്റെ കാര്യത്തിൽ കുട്ടികളിൽ ഏതൊരു വിധത്തിലുള്ള കഷ്ടതകളും അടിച്ചേൽപിക്കാൻ പാടില്ല.

20. രവീന്ദ്രനാഥ ടാഗോറിന് 1913-ൽ ഏറ്റവും ഉന്നത സാഹിത്യത്തിനുള്ള നോബൽ പുരസ്കാരം ലഭിച്ചിരുന്നു.

21. ദാരിദ്രം വിശപ്പ് ഈരണ്ട് ശാപങ്ങളേയും നാട്ടിൽനിന്ന് തുടച്ചു നീക്കേണ്ടതാണ്.

22. ഇന്ത്യാക്കാരുടെ ശാസ്ത്രീയ വളർച്ച ഇംഗ്ലീഷ് ഇല്ലാതെതന്നെ സാദ്ധ്യമാകുന്നു.

23. നാം നമ്മുടെ കടമകൾ ചെയ്തു തീർത്തു എന്ന് വിചാരിച്ച് ഒഴിഞ്ഞുമാറുന്നത് വളരെ തെറ്റാവുന്നു.

24. വിദ്യാർത്ഥികൾ തങ്ങളുടെ പഠനകാലത്ത് തന്നെ പഠിപ്പിനോടുകൂടി ഏതെങ്കിലും ഒരു തൊഴിൽ പഠിക്കേണ്ടതാണ്.

25. സൃഷ്ടിക്ക് അനുസരിച്ച് മനുഷ്യൻ മാറുന്നതു കൊണ്ട് സൃഷ്ടിയെ അവൻ ജയിച്ചു എന്ന് പറയാനാവില്ല.

हिन्दी में अनुवाद

पाठ – 1

एक दिन राजकुमार सिद्धार्थ राजोद्यान में खेल रहा था। तब आकाश में उड़ रहे कुछ हंस पक्षियों को देखा। उसने उन्हें बहुत चाहा। अचानक उनमें से एक पक्षी उसके पैरों पर आ गिरा। उसकी बगल में एक तीर लगा था। घाव में से खून बह रहा था। राजकुमार का मन यह देखकर दुखी हुआ। उसने धीरे से तीर बाहर निकाला और कुछ जडी–बूटियों को पीसकर घाव पर लगाया। पक्षी ने धीरे से आँखें खोलकर राजकुमार को देखा। तब वह बहुत खुश हुआ।

पाठ – 2

हम सब भारत के नागरिक हैं। सभी भारतीय एक बड़े समाज के सदस्य हैं। नागरिकों के अधिकार भी हैं और कर्तव्य भी। कुछ नागरिक सिर्फ़ अधिकारों के बारे में सोचते हैं। स्वार्थवश वे अपने कर्तव्यों को भूल जाते हैं। लेकिन हम कर्तव्य न करें, तो अधिकार की माँग कैसे कर सकते हैं? हमारी मातृभूमि हमें कई सुविधाएँ देती है। वह हमसे भी कई बातों की प्रतीक्षा करती है।

पाठ – 3

बाघ किसी जानवर को मारने के दूसरे दिन ही उसे खाने वहाँ आता है। इस कारण रामदास लगातार तीन दिन वहाँ आकर बाघ की राह देखता रहा। लेकिन बाघ बैल को खाने नहीं आया। घायल बाघ हमेशा खतरनाक होता है, आस–पास के गाँवों में घुसकर नुकसान पहुँचा सकता है, उसे ज़रूर मार डालना चाहिए। इसलिए रामदास ने बाघ को ढूँढना नहीं छोड़ा।

पाठ – 4

ग्रीष्मकाल में भारत भर में गरमी ज़्यादा होती है। तब कोई भी काम करना मुश्किल होता है। गरमी से बचने के लिए लोग पहाड़ी प्रदेशों में जाया करते हैं। कोडैक्कानल दक्षिण भारत का एक लोकप्रिय ग्रीष्म वासस्थल है। कहा जाता है कि कोडैक्कानल की जल–वायु इंग्लैंड की जल–वायु के समान है। यहाँ दिन में ऊटी की तरह न ज़्यादा गरमी होती है और न ही रात में ठंड। कोडैक्कानल का प्राकृतिक दृश्य इंग्लैंड जैसा होता है।

पाठ – 5

दुनिया भर में घटनेवाली सभी घटनाओं की सूचना समाचार-पत्र हमें देते हैं। चाहे दुनिया के किसी भी कोने में कोई भी खास घटना घटे, उसके बारे में एकाध घंटे में हम समाचार-पत्रों के द्वारा जान सकते हैं। चाहे जापान में भूकंप हो या आस्ट्रेलिया में रेल की दुर्घटना, तत्संबंधी खबरें हम समाचार–पत्रों के द्वारा तुरंत जान लेते हैं। विभिन्न देशों के लोगों के बीच संबंध स्थापित करने में समाचार-पत्र बड़ी मदद करते हैं। आज की दुनिया में समाचार-पत्रों का स्थान महत्वपूर्ण है।

पाठ – 6

कई दिनों तक रबर की अधिक आवश्यकता नहीं रही। लेकिन बीसवीं शताब्दी के आरंभ में मोटरगाड़ी, घोड़ागाड़ी का स्थान लेने लगी। मोटरगाड़ी के टायर बनाने के लिए उत्तम रबर की आवश्यकता पड़ी। पहले पहल बागों में 'सीरा' जाति के रबर के पेड़ उगाये गये। 'सीरा' रबर में एक सुविधा है। ये पेड़ जल्दी पनपकर रबर देने लगते हैं। इन पेड़ों के लिए ज़्यादा देखभाल की ज़रूरत नहीं है। लेकिन ये लंबे समय तक नहीं रहते। दूसरा 'पेरा' किस्म का रबर है। 'पेरा' रबर पेड़ से 'सीरा' रबर के पेड़ आकार में छोटे होते हैं। 'पेरा' रबर पेड़ की तरह ये उतना दूध भी नहीं देते। अब 'सीरा' के बदले सभी जगहों में 'पेरा' पेड़ उगाये जाते हैं।

पाठ - 7

राजा दशरथ ने अपने बुढ़ापे के कारण राज्य का अधिकार राम को सौंपकर आराम करने का निर्णय लिया। राम के राज्याभिषेक का इंतजाम बड़ी धूमधाम से किया गया। लेकिन दशरथ की छोटी रानी कैकेयी बड़े दुख में डूबी हुई थी। एक ज़माने में चक्रवर्ती दशरथ ने उसे दो वर देने का वादा दिया था। अब तक उसने वे वर नहीं माँगे। लेकिन अब राम को राजा बनाने की खबर सुनते ही उसने दशरथ से वे दोनों वर माँगे। एक वर से भरत को राजा बनाना; दूसरे वर से राम को चौदह साल के लिए वनवास भेजना।

पाठ - 8

कुछ पक्षियों और जानवरों की देखने की, सूँघने की, सुनने की शक्ति मनुष्य से भी तेज़ होने के कारण जिन विषयों को हम जान नहीं सकते, उन्हें वे जान लेते हैं। सन् 1934 को बिहार में एक भीषण भूकंप हुआ जिसके कारण भयंकर नाश भी हुआ। जिस दिन भूकंप हुआ, उस दिन सूरज खूब चमक रहा था। अचानक सैकड़ों कौए कर्कश आवाज़ में एक साथ 'काँव-काँव' करने लगे। सब लोग यह सोच ही रहे थे कि इन्हें क्या हुआ तब भूमि उग्रता से काँपने लगी।

पाठ - 9

हमें लगता है मानों सूरज आकाश में चल रहा हो। लेकिन यह तुमको मालूम ही है कि वास्तव में सूरज चलता नहीं। पृथ्वी दिन में एक बार अपने अक्ष पर खुद घूमती है। अपने अक्ष पर घूमते समय पृथ्वी पर जहाँ हम रहते हैं, वह भाग सूरज की ओर मुड़ता है। तब सूरज की किरणें उस भाग पर पड़ती हैं। इसी को दिन कहते हैं। फिर वह भाग सूरज की विपरीत दिशा में मुड़ता है। तब सूरज की किरणें उसपर नहीं पड़तीं। यही रात है।

पाठ - 10

गाँधीजी कहते हैं– "बड़ा होने के बाद सिगरेट सुलगाने की इच्छा मैंने कभी नहीं की। मैं हमेशा यही सोचता था कि सिगरेट सुलगाना गंदा है, बुरा है और असभ्य है। दुनिया भर में सिगरेट सुलगाने की ऐसी इच्छा क्यों है, यह मैं कभी समझ नहीं सका। सिगरेट सुलगानेवालों के बीच में यात्रा करना मेरे लिए असह्य है। ऐसी जगहों पर मेरी साँस घुट जाती है।"

नमूने के प्रश्न-पत्र

Roll No: 5308125

राष्ट्रभाषा-1

RASHTRABHASHA-1

समय : 2½ घंटे] **[पूर्णांक : 100**

1. कवि और कविता का नाम बताते हुए किन्हीं <u>दो</u> पद्यांशों का भावार्थ हिन्दी में लिखिए। **8**

(1) उपलक्ष के पीछे कभी विगलित न जीवन-लक्षय हो,
जब तक रहें ये प्राण तन में पुण्य का ही पक्ष हो,

(2) मुझे तोड़ लेना 'वनमाली'
उस पथ में देना तुम फेंक;
मातृभूमि पर शीश चढ़ाने
जिस पथ जावें वीर अनेक।।

(3) जग पीड़ित है अति दुख से,
जग पीड़ित रे! अति सुख से
मानव जग में बँट जावें,
दुख-सुख से औ' सुख-दुख से।

(4) राजहठी ने फेंक दिए सब
अपने रजत - हेम - उपहार
'लूँगा वही, वही लूँगा मैं।'
मचल गया वह राजकुमार।

(5) सम्पूर्ण धरती है माँ
हमारी साँसों की धुरी पर घूमती
जहाँ सबसे पहले फूटे जीवन के अंकुर।

2. कवि का नाम बताते हुए किसी <u>एक</u> कविता का सारांश लिखिए। **10**

(1) भारत की नारी (2) भिक्षुक (3) शुभ कामना (4) चाह

3. किन्हीं <u>दो</u> दोहों का कंठस्थ रूप ज्यों का त्यों लिखिए। **4**

(1) पाँच पहर ....
.... कैसे होय।।

(2) धीरे-धीरे ....
.... फल होय।।

(3) रहिमन निज ....
.... लैहैं कोय।।

(4) खैर, खून, खाँसी ....
.... सकल जहान।।

4. किन्हीं <u>तीन</u> का भावार्थ हिंदी में लिखिए। **9**

(1) घरों पे नाम थे नामों के साथ ओहदे थे
बहुत तलाश किया कोई आदमी न मिला

(2) फ़रमान से पेड़ों पे कभी फल नहीं लगते
तलवार से मौसम कोई बदला नहीं जाता

(3) विद्या धन उदयम बिना, कहौ जु पावै कोन।
बिना डुलाये ना मिलै, ज्यों पंखे की पौन।

(4) अति परिचय ते होत है, अरुचि अनादर भाय।
मलयगिरि की भीलनी चंदन देत जराय।।

(5) माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रौंदे मोहि।
एक दिन ऐसा आएगा, मैं रौंदूगी तोहि।।

(6) रहिमन विपदा हूँ भली, जो थोरे दिन होय।
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय।

5. किन्हीं <u>पाँच</u> का अर्थ हिन्दी में लिखिए। **5**

(1) रिआयत (2) कोमल (3) नींव (4) पारदर्शी (5) तलाश
(6) उत्थान (7) प्रेरणा (8) विलक्षण (9) महामारी (10) यकीन

6. **किन्हीं पाँच का वाक्यों में प्रयोग कीजिए।** 10

(1) मुकद्दमा (2) ममता (3) इनकार करना (4) मनोनीत होना (5) हैरान होना (6) प्रभावित होना (7) सिद्धांत (8) चकित होना (9) संक्रामक (10) तेज़

7. **निम्न गद्यांश को ध्यान से पढ़कर नीचे दिये प्रश्नों के उत्तर लिखिए।** 5

"मेरी झनझनाहट में जो अलौकिक मधुरिमा है, वह वीणापाणि की वीणा में कहाँ? भगवान् लक्ष्मीपति के पाँचजन्य शंख में कहाँ? कोकिल-कल-काकली में कहाँ? कामिनी के कोमल कण्ठ में कहाँ? मुरलीधर की मुरली में कहाँ? डमरूवाले के डमरू में कहाँ? वहाँ कहाँ? यहाँ कहाँ? मैं सप्त स्वरों से ऊपर अष्टम स्वर हूँ, परम मधुर हूँ। मैं रुपया हूँ"।

1. रुपये की झनझनाहट में क्या है?
2. रुपया अपने को क्या कहता है?
3. रुपये में जो मधुरिमा है वह कहाँ-कहाँ नहीं मिलती है?

8. **किन्हीं दो प्रश्नों के उत्तर एक या दो वाक्यों में लिखिए।** 4

(1) राय साहब ने अपनी नेकनीयती कैसे साबित की?
(2) गाँधीजी कब से कब तक दक्षिण आफ्रिकी में रहे?
(3) कामराज ने शिक्षा के क्षेत्र में क्या-क्या सेवाएँ कीं?
(4) प्रतिरोधात्मक शक्ति को बढ़ाने के लिए रोज क्या करना चाहिए?
(5) राजा कृष्णदेवराय ने नाराज़ होकर तेनाली राम थी?
(6) परमहंस की वाणी में कौन-सी शक्ति से क्या कहा?

9. **किसी एक पाठ का सारांश लिखिए।** 10

(1) सभ्यता का रहस्य (2) कोविड़-19 (3) शिवाजी की गुरु भक्ति

10. **किसी एक एकांकी का सारांश लिखिए।** 10

(1) रीढ़ की हड्डी (2) अंधेर नगरी (3) शहीद झलकारी बाई

11. **किसी दो पात्रों का परिचय दीजिए।** 10

(1) राजेश्वरी (2) उमा (3) गुणवंती (4) अनबूझ राजा (5) लक्ष्मीबाई

12. **किन्हीं दो प्रश्नों के उत्तर एक या दो वाक्यों में लिखिए।** 5

(1) जीवनलाल क्यों बेचैन हुए?
(2) 'रीढ़ की हड्डी' एकांकी का उद्देश्य क्या है?
(3) अंत में राजा फाँसी पर क्यों चढ़ा?
(4) योगी कौन है? वह क्या इलाज़ करता है?
(5) झलकारीबाई को वीर-गति कैसे प्राप्त हुई?

13. **संदर्भ सहित किन्हीं दो का भाव समझाइए।** 10

(1) तुम बहुत बहादुर हो। हम तुम्हारी बहादुरी को सलाम करते हैं। लेकिन अब तुम हमारी बंदी हो।
(2) प्रथम बार विवाह करना एक पावन कर्तव्य है, दूसरी बार एक मूर्खता, और तीसरी बार एक पागलपन।"
(3) अरे, मैं नाहक मारा जाता हूँ। यहाँ बड़ा ही अंधेरा है, गुरुजी। तुम कहाँ हो।
(4) "जनाब, मोर के पंख होते हैं, मोरनी के नहीं, शेर के बाला होते हैं, शेरनी के नहीं।"
(5) इन मोतियों का मूल्य समझनेवाला यहाँ कोई नहीं है। पानी से पत्थर नहीं पिघल सकता।

राष्ट्रभाषा-2
RASHTRABHASHA-2

समय : 2½ घंटे] [पूर्णांक : 100

1. किसी एक कहानी का सारांश लिखिए। **10**

(1) परीक्षा (2) देश भक्त (3) अब्बूखाँ की बकरी

2. किसी एक महान व्यक्ति की जीवनी का सारांश लिखिए। **10**

(1) पंडित दीनदयाल उपाध्याय (2) ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

(3) नेताजी सुभाषचंद्र बोस (4) राजगोपालचार्य

3. किसी एक विषय पर निबंध लिखिए। **10**

(1) कृत्रिम उपग्रह (2) समय का सदुपयोग

(3) विद्यार्थी जीवन (4) गणतंत्र दिवस

4. किन्हीं तीन का भिन्न-भिन्न अर्थों में वाक्यों में प्रयोग कीजिए। **6**

(1) उत्तर (2) मत (3) कि (4) की (5) दिया (6) कोई

5. समानार्थी शब्द लिखिए। **6**

(1) हवा (2) नक्षत्र (3) देश (4) समुद्र (5) भाषा (6) पानी

6. वचन बदलिए। **6**

(1) पेशा (2) वृक्ष (3) खबर (4) सभ्यता (5) जाति (6) बाहु

7. लिंग बदलिए। **6**

(1) युवक (2) काका (3) छात्र (4) सास (5) बादशाह (6) बाघ

8. किन्हीं तीन वाक्यों का वाच्य बदलिए। **6**

(1) हम हिन्दी सीखते हैं। (2) अध्यापक हिंदी बोले।

(3) मुझसे पत्र लिखा जाएगा (4) नौकर से काम किया जा रहा है।

(5) हम तेज़ दौड़ नहीं सकते। (6) उससे धूप में चला नहीं जाता।

9. सूचना के अनुसार बदलिए। **5**

(1) वह बच्चा भूखा है। (**'भूखा'** के बदले **'भूख'** का प्रयोग)

(2) तुमने किताब दी। वह बहुत अच्छी थी। (**'जो-वह'** का प्रयोग)

10. किन्हीं दो लोकोक्ति/कहावतों को समझाइए। **10**

(1) हीरे की परख जोहरी जाने (2) चिराग तले अंधेरा

(3) कुआँ प्यासे के पास नहीं जाता (4) हवन करते हाथ जलना

(5) आग लगे तब खोदे कुआँ

प्रान्तीय भाषा में अनुवाद कीजिए।

(अ) गाँधीजी ने एक बार कहा था, "धन गया तो कुछ नहीं गया, स्वास्थ्य गया तो कुछ गया, मगर चरित्र गया तो सब कुछ गया।" इसका मतलब है, चरित्र ही मनुष्य की असली संपत्ति है। वही समाज श्रेष्ठ है और वही राष्ट्र सुखी है जिसकी जनता का चरित्र अच्छा हो। आज के बालक कल के नागरिक हैं। इसलिए उनके चरित्र का निर्माण करना समाज और राष्ट्र का पहला कर्तव्य है। यही कारण है कि स्कूल, कालेज आदि शिक्षा–संस्थाएँ खोली गयी हैं। यहाँ ऐसी शिक्षा दी जाती है, जिससे लड़कों का चरित्र सुधर जाए। **5**

(आ)
1. मारनेवाले से जिलानेवाला अच्छा है। **5**
2. पहाड़ बादलों को रोककर पानी बरसाते हैं।
3. गरीबी और भूख–दोनों शापों को देश से हटाना चाहिए।
4. समुद्र के द्वारा भारतवर्ष और अन्य देशों के बीच दो हज़ार वर्ष पहले से व्यापार चला आ रहा है।
5. रबड़ का दूध निकालने के लिए रबड़ के पेड़ के तने में एक छोटा-सा छेद कर दिया जाता है।

हिन्दी में अनुवाद कीजिए। **15**

We are all citizens of India. Each of us is a member of one great community, which includes every Indian. The citizen has both rights and duties. Some people think only of their rights. They forget their duties on account of their selfishness. But if we don't perform our duties, how can we claim our rights? Our motherland gives much to us, and expects much from us in return.

(अंग्रेज़ी)

நாம் எல்லோரும் இந்தியக் குடிமக்கள். இந்தியர்கள் எல்லோரும் ஒரு பெரிய சமூகத்தின் உறுப்பினர்கள். குடிமக்களுக்கு உரிமைகளும் உண்டு, கடமைகளும் உண்டு. சிலர் உரிமைகளைப் பற்றியே எண்ணுகிறார்கள். சுயநலத்தின் காரணமாக தங்கள் கடமைகளை மறந்து விடுகிறார்கள். ஆனால் நாம் கடமைகளைச் செய்யாவிட்டால் உரிமைகளை எவ்வாறு கோரமுடியும்? நம் தாய் நாடு நமக்கு அநேக வசதிகளைக் கொடுக்கிறது. நம்மிடமிருந்தும் அது அனேக விஷயங்களை எதிர்பார்க்கிறது.

(तमिल)

మనమందరము హిందూదేశ పౌరులము. ప్రతి భారతీయుడు ఈ సమాజములో ఒక సభ్యుడు. దేశవాసులకు హక్కులు, కర్తవ్యాలు రెండూ ఉంటాయి. కొంతమంది తమ హక్కులను గూర్చియే ఆలోచిస్తారు. వారు తమ స్వార్థంతో తమ కర్తవ్యాన్ని మరచిపోతారు. కాని మనం మన కర్తవ్యాన్ని